मासिक

# अध्यात्म संदेश

जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन की मासिक ई – पत्रिका

वर्ष: 3। अंक: 20। पृष्ठ: 49। मूल्य: नि:शुल्क । इंदौर–उज्जैन। सोमवार 1 अप्रैल 2024 ।चैत्र/वैशाख मास (2), विक्रम संवत् 2080/81। इ. संस्करण

प्रेरणा स्रोत
महासिद्ध गुरू गोरक्षनाथ जी

सलाहकार समिति
महंत बालक नाथ योगी जी
गद्दीनशीन महंत, मठ अस्थल बोहर, रोहतक
संसद सदस्य (लोकसभा), अलवर, राजस्थान
कुलाधिपति, श्री बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय (हरियाणा)

महंत पीर योगी रामनाथ जी
भर्तृहरि गुफा, उज्जैन (मध्य प्रदेश)

महंत डॉ. योगी विलासनाथ जी
अध्यक्ष, श्री गुरू गोरक्षनाथ शिव पंचायतन मन्दिर (ट्रस्ट), गाळणे (महाराष्ट्र)

राष्ट्रसंत बालयोगी उमेशनाथ जी
पीठाधीश्वर–वाल्मीकि धाम, उज्जैन (मध्य प्रदेश)

प्रधान सम्पादक
योगी शिवनन्दन नाथ

सम्पादक मंडल

वरिष्ठ सम्पादक
डॉ. संतोष खन्ना (दिल्ली)

सम्पादक
डॉ. अलका शर्मा (दिल्ली)

उपसम्पादक
श्रीमती सुषमा सागर मिश्रा (लखनऊ)
सुश्री इंदु सिंह "इन्दुश्री" (मध्य प्रदेश)

ग्राफिक्स
IDEAwave COMMUNICATIONS

प्रकाशक एवं स्वामी
गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फ़ाउण्डेशन

- गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फाउंडेशन सर्वाधिकार सुरक्षित। किसी भी रूप में सामग्री की नकल प्रतिबंधित।
- पत्रिका में प्रकाशित सामग्री का समस्त उत्तरदायित्व लेखकों का है। प्रकाशक, प्रधान संपादक एवं संपादक मंडल इसके लिए किसी भी प्रकार से उत्तरदायित्व नहीं होंगे।
- समस्त विवादों का निस्तारण, मध्य प्रदेश सीमांतर्गत सक्षम न्यायालयों में किया जाएगा।

editor.adhyatmsandesh@gmail.com

# अनुक्रमणिका


| क्र. | विषय | लेखक | पृष्ठ क्र. |
|---|---|---|---|
| 1 | संपादक की कलम से | डॉ. अलका शर्मा | 03 |
| 2 | नव संवत्सर | सुजाता प्रसाद | 05 |
| 3 | नव संवत्सर | गौरीशंकर वैश्य विनम्र | 08 |
| 4 | पर्यावरण चिन्तन 14 | डॉ. मेहता नगेन्द्र सिंह | 09 |
| 5 | नवरात्रि – सम्पूर्ण जीवन रहस्य | डॉ. अलका शर्मा | 10 |
| 6 | माँ दुर्गा के दोहे | प्रो. डॉ. शरद नारायण खरे | 12 |
| 7 | भागो नहीं दुनिया को बदलो | कृष्ण कुमार यादव | 13 |
| 8 | मौन हुई अंतस की पीड़ा | सुमन मिश्रा | 16 |
| 9 | आभूषण भारत की सांस्कृतिक .... | डॉ. शारदा मेहता | 17 |
| 10 | राष्ट्रीय गौरव के मेरूदंड... | डॉ. हनुमान प्रसाद उत्तम | 20 |
| 11 | रामनवमी के पावन अवसर पर | श्रीमती सुषमा सागर मिश्रा | 22 |
| 12 | श्री राम वन्दना | ब्रह्मेश्वर नाथ मिश्र | 25 |
| 13 | बाल साहित्य एवं बच्चों से संवाद | डॉ. सन्तोष खन्ना | 26 |
| 14 | ऐतिहासिक है जोधपुर में... | आकांक्षा यादव | 28 |
| 15 | बड़ी उपलब्धियों व आशातीत... | सीताराम गुप्ता | 30 |
| 16 | भव सागर पार हमें कर दें | डॉ. विष्णुप्रसाद पाठक | 31 |
| 17 | श्री हनुमान प्रकट्योत्सव... | सोनल मंजू श्री ओमर | 32 |
| 18 | शिव पार्वती का विवाह | चेतना साबला | 33 |
| 19 | कर्मगत श्रेष्ठता द्वारा आंतरिक... | डॉ. अजय शुक्ला | 34 |
| 20 | महाकाली के पावन स्थल.... | डॉ. षैजू के | 37 |
| 21 | भक्ति से मुक्ति | डॉ. अर्चना प्रकाश | 40 |
| 22 | आनन्दरामायण में स्पष्ट बताया... | डॉ. नरेन्द्रकुमार मेहता | 42 |
| 23 | भारतीय नववर्ष | डॉ. अ किर्ति वर्द्धन | 45 |
| 24 | संत ज्ञानेश्वर | वंदना पुणतांबेकर | 46 |
| 25 | मैं कण तुम्हारा एक हूँ... | रमेश चन्द्र | 47 |
| 26 | कैला देवी दर्शन | मुकेश कुमार ऋषि वर्मा | 48 |

# संपादक की कलम से

**डॉ. अलका शर्मा**
(वर्ल्ड रिकॉर्ड होल्डर)
संपादक अध्यात्म संदेश

***सच पूछो तो शर में ही।***
***बसती दीप्ति विनय की ।।***
***संधि वचन संपूज्य उसी का ।***
***जिसमे शक्ति विजय की ।।***

***अध्यात्म संदेश पत्रिका परिवार के सभी सुधी जनों को नमोनमः***

*मुझे पूर्ण विश्वास है कि उपरोक्त पंक्तियों को पढ़ते ही स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व के भारत की स्थिति से लेकर वर्तमान में विश्व पटल पर चमकते भारत की उपलब्धियो की सारी तस्वीर आपके मानस पटल पर चलचित्र की भांति ऐसे अंकित होगी। कि आपके अंतर्मन में भारत के अतीत की स्मृतियों के असंख्य पन्ने यकायक फड़फड़ा उठेंगे ।*

*सम्पूर्ण राष्ट्र के लिए यह अत्यंत गौरव का विषय है भारत बहुत दूर तक की मारक क्षमता वाले अग्नि-5 मिसाइल का निर्माण करके विशेष शक्ति से सम्पन्न होकर विश्व के श्रेष्ठतम देशों की अग्रिम पंक्ति में स्थापित हो गया है। अपने शौर्य व अति कुशल नेतृत्व के कारण ही आज भारत शीर्षस्थ स्थान पर आसीन है । क्योंकि -*

*Offers of pact and Treaties are respected only when backed by invincible strength to win-*

*सदा से अहिंसा के पक्षधर रहे भारत ने सबको स्पष्ट शब्दो मे बता दिया है वर्तमान का भारत पहले वाला भारत नही है। आज भारत ने जल,थल, नभ में अपनी शक्ति का प्रदर्शन करके विश्व भर में अपने शौर्य का परचम फहरा दिया। साथ ही विश्व को स्पष्ट संदेश द्वारा बता दिया है कि हम भारतीय एक हाथ मे शास्त्र रखना जानते है तो दूसरे हाथ मे शस्त्र भी धारण करते है। पोखरण परीक्षण तो नए भारत के शंखनाद की भांति शत्रु का मानमर्दन करने के लिए पर्याप्त है। अनेको महत्वपूर्ण पर्वो से युक्त अप्रैल आगमन से चौत्र नवरात्रि और शक्तिस्वरूपा माँ भगवती के स्मरण मात्र से मन सकारात्मक ऊर्जा से परिपूर्ण होकर स्वतः उनके प्रति श्रद्धानत हो जाता है।*

***या देवी सर्व भूतेषु शक्ति रूपेण संस्थिता। नमस्तस्ये नमस्तस्ये नमो नमः।।***

*नवरात्रि का पावन पर्व 9 अप्रैल से प्रारंभ हो रहा है। 13 अप्रैल को भारत मे अलग अलग नाम से जाने जाना वाला बैसाखी का पुण्य पर्व मनाया जाएगा। जिसे सिक्ख समुदाय के लोग खालसा पंथ के स्थापना दिवस के रूप में मनाते है। बंगाल में पोइला बैशाख (नव वर्ष) के रूप में, असम में बिहू, बिहार में बैशाख के रूप में मनाया जाता है। पंजाब के किसान नई फसल के निमित्त भगवान का धन्यवाद ज्ञापन गुरुद्वारों में लंगर भोज लगाकर करते है।*

*14 अप्रैल को भारतीय संविधान के निर्माता, संविधान की आत्मा कहे जाने वाले डॉ. बाबा साहिब भीमराव राम अम्बेडकर की जयंती का पर्व मनाया जाएगा। आपको सिंबल ऑफ नॉलिज, फादर ऑफ लॉ, ग्रेटेस्ट इंडियन जैसी उपाधियों से विभूषित किया गया था।*

*मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान राम का जन्मोत्सव 17 अप्रैल को मनाया जाएगा। 21अप्रैल को जैन धर्म के संस्थापक भगवान महावीर जी की जयंती का पावन पर्व मनाया जाएगा। चौत्र मास की शुक्ल पक्ष की पूर्णिमा तिथि 23 अप्रैल को हनुमान प्राकट्योत्सव का विशेष पर्व मनाया जाएगा।*

*अध्यात्म संदेश पत्रिका का अप्रैल मास का अंक आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुए हम सभी अति हर्षित, पुलकित है। पत्रिका में अपने ज्ञानवर्धक, रोचक लेखों से सहयोग करने वाले सभी विद्वानो का सादर आभार। पत्रिका में आपके सुझाव व प्रतिक्रियाओ का सदा स्वागत है।*

*आशा है पत्रिका के प्रति सभी सुधी जनो का प्रेम उत्तरोत्तर वृद्धि को प्राप्त होगा।*

*संपादक*
*डॉ. अलका शर्मा*

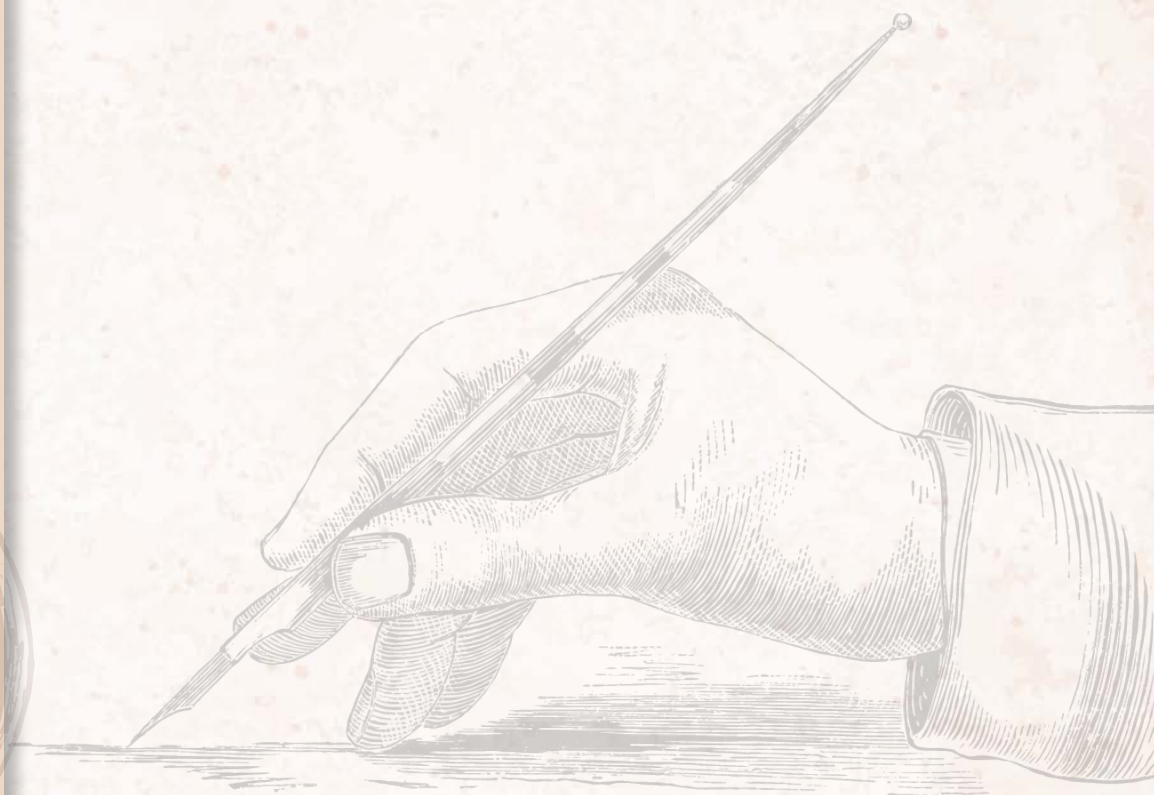

# नव संवत्सर

**सुजाता प्रसाद**
स्वतंत्र रचनाकार
शिक्षिका सनराइज एकेडमी
नई दिल्ली, भारत

हिंदू नववर्ष की शुरुआत चौत्र माह की प्रतिपदा से होती है। हिंदी कैलेंडर में चौत्र महीना वर्ष का पहला महीना होता है और फाल्गुन माह आखिरी महीना होता है। सनातन धर्म का यह कैलेंडर सबसे पुराना कैलेंडर है, जिसके अनुसार हिंदू नववर्ष चौत्र माह में पड़ता है। यह नववर्ष हिंदू नव संवत्सर या नया संवत के नाम से भी जाना जाता है। **"संवत्सर"** संस्कृत भाषा का एक शब्द है जिसका अर्थ होता है वर्ष, जिसे ज्योतिष ग्रंथों में संक्षेप में संवत भी कहा गया है।

चित्रा नक्षत्र से संबंध होने कारण इसका नाम चौत्र है। यह मास भारतीय पंचांग का पहला महीना है। चौत्र मास दो ऋतुओं का संधिकाल माना जाता है। बसंत की बहार के साथ इस समय सर्दी का समापन हो रहा होता है और ग्रीष्म ऋतु के आगमन की तैयारी हो रही होती है। प्रकृति अपने नए रूप में प्रकट होने लगती है। सभी प्राणियों में नवीन ऊर्जा संचारित होने लगती है। चौत्र का महीना इस ब्रह्मांड का पहला दिन माना जाता है। इसी महीने से हिंदू नववर्ष की शुरूआत होती है, जिसे संवत्सर कहा जाता है। चौत्र के इस पवित्र मास का ज्योतिष शास्त्र से भी अत्यंत गहरा संबंध है, क्योंकि ग्रह, ऋतु, मास, तिथि एवं पक्ष आदि की गणना भी चौत्र प्रतिपदा से ही की जाती है। इस महीने से ही प्रकृति में शुभता और नई ऊर्जा का संचार होता है। इस महीने को भक्ति और संयम का महीना भी कहा जाता है, क्योंकि इन दिनों में कई व्रत और पर्व आते हैं।

पुराणों में कहा गया है कि देव युग में ब्रह्मा जी ने बसंत ऋतु में इसी विशेष दिन सृष्टि की रचना प्रारंभ की थी, इसलिए इस दिन से विक्रम संवत के नए साल की शुरुआत होती है। अंग्रेजी कैलेंडर के अनुसार यह तिथि अप्रैल में आती है। वर्तमान वर्ष (2024) में यह नव वर्ष 9 अप्रैल को है। इस समय हिंदू नववर्ष 2080 चल रहा है। चौत्र माह की शुरुआत इस वर्ष 26 मार्च से हो रही है। ईसा पूर्व 57 (57 BC) में विक्रम संवत की शुरुआत मानी जाती हैं। इसलिए ईस्वी सन् में 57 जोड़ने पर विक्रम संवत प्राप्त होता हैं। कुछ विद्वानों का मानना है कि यह संवत ईसा पूर्व 57 से भी अधिक प्राचीन है। इसके अलावा भी इस प्रकार की विशेष पद्धतियां समय के साथ विभिन्न चरणों में विकसित हुई। कुछ विद्वान **"कृत संवत"** को विक्रम संवत का पूर्ववर्ती मानते हैं। ऐसा ही एक दूसरा महत्वपूर्ण संवत हैं **"शक संवत"**। **"सप्तर्षि संवत"**, जो कश्मीर में लौकिक संवत के नाम से प्रसिद्द है। यह भी एक महत्वपूर्ण संवत है। आज भी हमारे देश में शिक्षा तथा राजकीय कोष आदि के संचालन का काम मार्च अप्रैल महीने में किया जाता है जो चौत्र शुक्ल प्रतिपदा के आसपास का समय होता है।

**विक्रम संवत के प्रणेता सम्राट विक्रमादित्य हैं। अध्ययन के अनुसार इसी चौत्र प्रतिपदा के दिन लगभग 2074 वर्ष पूर्व उज्जयिनी नरेश महाराज विक्रमादित्य ने राष्ट्र को सुसंगठित कर विदेशी आक्रांता शकों से भारत भूमि की रक्षा की थी और उनकी शक्ति को जड़ सहित उन्मूलित कर पराजित कर दिया था। शक आक्रांताओं के साथ यवन, हूण, तुषार पारसिक तथा कम्बोज देशों पर भी अपनी विजय पताका फहरा दी थी। सम्राट विक्रमादित्य के विजय पर्व की स्मृति के रूप में वर्ष प्रतिपदा संवत्सर के रूप में मनाई जाती है। कहा जाता है कि इस विजय के बाद जब सम्राट विक्रमादित्य का राज्यारोहण हुआ तब उन्होंने पूरे राज्य की जनता का ऋण अपनी ओर से चुकाकर इस संवत को प्रारंभ किया था। इस दिन नये भारतीय कैलेण्डर को जारी किया गया था और इसी दिन से कालगणना प्रारम्भ की गई थी।**

विक्रम संवत्सर भारत की सांस्कृतिक पहचान है। जो भारत में सर्वमान्य है तथा लोकप्रिय भी। साथ ही यह संवत्सर वैज्ञानिक दृष्टिकोण से प्रामाणिक भी है। विक्रम संवत्सर की गणित अत्यंत सटीक है। यह हमारे उपयोग के लिए सुगम है। चन्द्र मास तथा सौर नक्षत्र वर्ष का उपयोग करके इस संवत्सर की गणना की जाती है। जिसमें बारह महीने का एक वर्ष होता है तथा एक सप्ताह में सात दिन होते हैं। उपयोगी अध्ययन बताते हैं कि **"बारह महीने का एक वर्ष तथा सात दिनों का एक सप्ताह"** सबसे पहले विक्रम संवत से ही शुरू हुआ था जो आगे चलकर अन्य विदेशी कैलेंडरो में अपनाया गया।

खगोल शास्त्री वैज्ञानिकों द्वारा एक महीने में दिन की गणना सूर्य तथा चन्द्रमा की गति के आधार पर तय किया जाता है।

इसमें प्रत्येक महीने को शुक्ल पक्ष तथा कृष्ण पक्ष में बांटने की प्रक्रिया अपनाई जाती है। सूर्य और चंद्रमा की गति अलग अलग होने के कारण सौर वर्ष तथा चन्द्र वर्ष में अंतर होना प्राकृतिक है। इसीलिए सौर वर्ष और चंद्र वर्ष में सामंजस्य बनाए रखने के लिए हर तीसरे वर्ष पंचांगों में एक चंद्रमास जोड़ देने का प्रावधान किया गया है। इसी जुड़े हुए एक अतिरिक्त चंद्रमास के कारण इसे अधिमास, अधिकमास या मलमास कहा जाता है। हिंदू नववर्ष या विक्रम संवत्सर में पूर्णिमा के दिन चन्द्रमा जिस नक्षत्र में होता है, उसी आधार पर महीनों का नामकरण किया जाता है। जबकि अन्य विदेशी कैलेंडरों में महीनों का नामकरण किसी देवता या संख्या के आधार पर किया जाता है।

आजकल हिंदू नववर्ष हर व्यक्ति के जिज्ञासा का केंद्र बना हुआ है, और हिन्दू नववर्ष की चर्चा चारों ओर हो रही है। हिंदू नववर्ष क्या है यह प्रश्न स्वाभाविक रूप से जिज्ञासु मन में उठ रहा है। चौत्र माह की शुक्ल प्रतिपदा को उत्तर भारत में नव वर्ष का प्रारंभ माना जाता है। यह विक्रम संवत्सर का प्रारंभ ही है जिसे हम हिन्दू नववर्ष कहते हैं। हालांकि गुजरात तथा आस-पास के क्षेत्रों में दीपावली के समय नववर्ष की परंपरा है। इसलिए गुजरात में कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा से नव वर्ष का प्रारंभ माना जाता हैं। अनेक राज्यों में विक्रम संवत का पंचांग प्रचलित है। नेपाल का यह सरकारी संवत है। भारत का सरकारी संवत शक संवत है।

इस प्रकार भारतीय संदर्भ में चर्चा करें तो हिन्दू नववर्ष देश के अलग-अलग राज्यों में स्थानीय संस्कृति एवं लोकचार के अनुसार मनाया जाता है। महाराष्ट्र तथा अनेक राज्यों में यह पर्व गुड़ी पड़वा के नाम से प्रचलित है। पडवा यानी प्रतिपदा और गुढी अर्थात ध्वज या झंडा। कर्नाटक एवं आंध्र प्रदेश में भी नववर्ष चौत्र प्रतिपदा को ही मनाया जाता है। इसे 'उगादि' कहा जाता है। केरल में नववर्ष 'विशु उत्सव' के रूप में मनाया जाता है। असम में भारतीय नववर्ष 'बिहाग बिहू' के रूप में मनाया जाता है। बंगाल में भारतीय नववर्ष वैशाख की प्रतिपदा को मनाया जाता है। इससे 'पोहिला बैसाख' यानी प्रथम वैशाख के नाम से जाना जाता है। तमिलनाडु का 'पुथांडू' हो या नानकशाही पंचांग का 'होला-मोहल्ला' भारतीय नववर्ष के उत्सव के समान ही मनाये जाते हैं। पंजाब की बैसाखी यानी वैशाखी पंजाब के लिए एक फसल उत्सव है और पंजाबी कैलेंडर के अनुसार पंजाबी नए साल का प्रतीक है। सिंधी समाज में नववर्ष चौत्र शुक्ल प्रतिपदा को 'चेटीचंड' के रूप में मनाने की प्रथा है। कश्मीर में भारतीय नववर्ष 'नवरेह' के रूप में मनाया जाता है। भारत में यह संवत्सर वासन्तिक या चौत्रीय नवरात्र का प्रथम दिवस के रुप में मनाया जाता है। बसंत के वैभव का प्रतीक और प्रकृति के श्रृंगार का पर्व है नव संवत्सर।

**आत्मा न तो जन्म लेती है और न ही मरती है**

# 2 अप्रैल

*आप जन–जन को अध्यात्म से जोड़ने और समाज को सत्य–पथ, जन सेवा, भक्ति–मार्ग, ध्यान–पथ के अनुगामी बनाने के लिए निरंतर प्रयत्नशील रहे हैं। आपकी दिव्य दूरदृष्टि, दृढ़ संकल्प शक्ति, विचारधारा हम सभी के लिए पवित्र सकारात्मक उर्जा व प्रेरणा स्रोत रही हैं।*

**अध्यात्म संदेश** *मासिक ई पत्रिका के आप सलाहकार समिति के सम्मानित पदाधिकारी हैं। आपका जन्मदिन हम सभी के लिए एक पावन त्योहार है।*

अखिल भारतीय नाथ सम्प्रदाय मठाधीश
श्री श्री 1008 महंत पीर
योगी रामनाथ जी महाराज
(मठ भर्तृहरि गुफा, उज्जैन)

# जन्मोत्सव की अनंत शुभकामनाएं

– योगी शिवनंदन नाथ
(प्रधान संपादक)

# नव संवत्सर

**गौरीशंकर वैश्य विनम्र**
लखनऊ

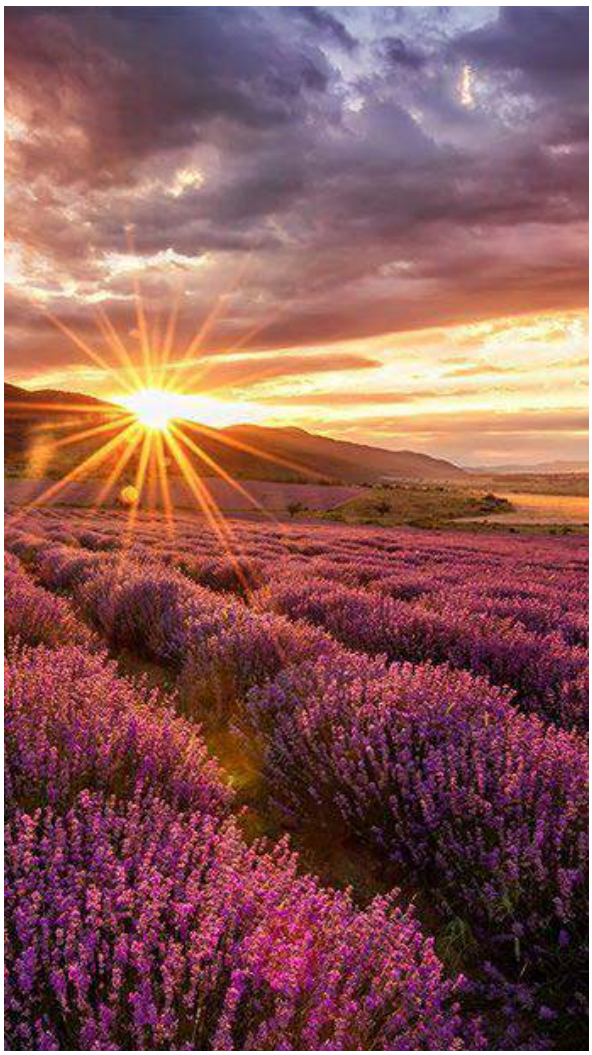

भारतीय नववर्ष तुम्हारा, स्वागत, अभिनंदन।
आओ! आओ! नवसंवत्सर, हार्दिक अभिवंदन।

चौत्र शुक्ल प्रतिपदा सुतिथि को
होता शुभ आगमन तुम्हारा
हिंदू संस्कृति में इस दिन ही
सृष्टि– जयंती पर्व हमारा

सजीधजी – सी प्रकृति दे रही, स्नेहिल आलंबन।

महाराज विक्रमादित्य ने
शत्रु विदेशी किए पराजित
विक्रम संवत नाम दिया था
शासक पद पर हुए विराजित

ऋषि भास्कराचार्य रचित, पंचांग है मनभावन।

आर्य समाज का सृजन दिवस शुभ
हुए अवतरित झूलेलाल
पर्व उगादी, चेतीचांद संग
गुड़ी पड़वा आता हर साल

ऋतु वासंती छटा विखेरे, मुस्काए उपवन।

जागें आर्यपुत्र निद्रा से
भारतीयता फिर अपनाएँ
नवसंवत्सर को स्वीकारें
अब न आँग्ल नववर्ष मनाएँ

बढ़े ज्ञान – विज्ञान निरन्तर, देश बने पावन।

बच्चे खिलें, युवा हर्षाएँ
पाएँ वृद्ध मान – सम्मान
सारी ऋतुएँ कल्याणी हों
बने विश्वगुरु हिंदुस्थान

अर्पित शुभकामना सभी को, रहे दिव्य तन – मन।
आओ! आओ! नवसंवत्सर, हार्दिक अभिवंदन।

स्थायी स्तम्भ

**डॉ. मेहता नगेन्द्र सिंह**
भू–वैज्ञानिक, पर्यावरणविद्
एवं हिन्दी रचनाकार, पटना

# पर्यावरण चिन्तन 14

*पृथ्वी पर हमारा उपमहाद्वीप भारत बडा ही भाग्यशाली है, जहाँ विविधता के मध्य एकता है,समरसता है और सहनशीलता भी अधिक है। अभी तक हम ठंड में ठिठुरे नहीं और गर्मी से उतना झुलसे नहीं। लेकिन वर्तमान में वैश्विक–तापन एवं जलवायु–परिवर्तन का जो सिलसिला है, वह अनुकूल और स्वस्थकर नहीं प्रतीत होता। इसके प्रति सावधान रहना समय की मांग है, क्योंकि मौसम पर कोई खास भरोसा रहा नहीं। प्रदूषण प्रकोप और वितान इतना वजनदार हो गया कि पर्यावरण की सेहत चरमरा गई।*

*जलवायु–परिवर्तन एक दीर्घकालिक प्रक्रिया बन गया। जो मानवीय कारकों द्वारा अधिक प्रभावित हो रही है। पृथ्वी के कक्षीय स्थिति में बदलाव या पृथ्वी के अक्षीय झुकाव आदि में परिवर्तन के कारण पृथ्वी को प्राप्त होने वाले सूर्यताप की मात्रा घटती–बढ़ती है। साथ ही सौर्यिक विकिरण की मात्रा में दीर्घकालिक वृद्धि होने से वायुमंडल का उष्मा होता है, जिस कारण गर्म जलवायु का आविर्भाव होता है। हिमचादरें एवं हिमनद पिघलने लगती हैं। इसी प्रकार सौर्य विकिरण की मात्रा में कमी होने से वायुमंडलीय तापमान में गिरावट होती है, जिस कारण जलवायु की शीत अवस्था का आविर्भाव होता है, फलतः हिमकाल का आगमन होता है। पुनः सूर्य क्रोड में संकुचन–व–सौर्यिक विकिरण में वृद्धि होती है एवं हिमकाल समाप्त हो जाता है और अर्धहिमकाल प्रारंभ हो जाता है।*

*जलवायु–परिवर्तन में सौर कलंक यानि सूर्य पर काले धब्बे की संख्या बढ़ने का भी प्रभाव पड़ता है। इससे सूर्य विकिरण की मात्रा में वृद्धि होती है। इस कारण पृथ्वी के धरातलीय सतह एवं उसके वायुमंडल का उष्मन होता है, इसी प्रकार सौर कलंक की संख्या घटने से सौर–विकिरण की मात्रा में ह्रास होता है,जिससे वायुमंडलीय तापमान में गिरावट आती है। जलवायु–परिवर्तन में ज्वालामुखीय उद्‌भेदन का असर पड़ता है।*

*क्रमशः*

# नवरात्रि –सम्पूर्ण जीवन रहस्य

**डॉ. अलका शर्मा**
(वर्ल्ड रिकॉर्ड होल्डर)
संपादक अध्यात्म संदेश

**सर्व मंगल मांगल्ये शिवे सर्वार्थ साधिके। शरण्ये त्र्यम्बके गौरी नारायणी नमोस्तुते।**

भारतीय संस्कृति में शक्ति की देवी माँ दुर्गा की आराधना का विशेष पर्व नवरात्रि को माना जाता है। नवरात्रि जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट है यह नौ दिनों तक चलने वाला अध्यात्मिक पर्व है । इन नौ दिनों में शक्ति स्वरूपा देवी माँ के नौ रूपो– **माँ शैलपुत्री, बृह्मचारिणी, चंद्रघंटा, कुष्मांडा, स्कन्धमाता, कात्यायनी, कालरात्रि, महागौरी, सिद्धिदात्री** की विशेष पूजा की जाती है। यह पर्व प्रत्येक व्यक्ति के लिए आत्म शुद्धि, आत्मावलोकन, शक्ति संचयन, शक्ति संवर्धन का पुनीत अवसर होता है। साल में दो बार आने वाले चौत्र नवरात्रि, शारदीय नवरात्रि के नाम से जाने वाले इन दोनों नवरात्रि का बहुत ही महत्व माना जाता है जो सभी गृहस्थियों के लिए प्रशस्त माने गए है। इसके अतिरिक्त दो बार गुप्त नवरात्रि होती है जो विशेष सिद्धि हेतु मंत्र तंत्र साधको के लिए होते है सामान्य गृहस्थों में इनका प्रचलन नही है।

आज के लेख में मेरा उद्देश्य सर्व बिदित नवरात्रि की पूजन विधि की चर्चा न करके नवरात्रि का वास्तविक अर्थ एवं सांकेतिक अर्थ को स्पष्ट करना है। वास्तव में नवरात्रि में

बाह्य जगत से अपनी चित्तवृत्तियों को हटाकर मन को आत्मकेंद्रित कर स्व को जानने की आध्यात्मिक यात्रा, व गहन शांति की ओर ले जाने वाली प्रक्रिया है।

परमेश्वरी, विश्वमोहिनी जगद्धात्री दुर्गा के प्रीत्यर्थ किये जाने वाले जप, तप, पाठ, अनुष्ठान भोग, भजन, पूजन आदि प्रायः नवरात्रि के दिनों में किये जाते हैं। इन दिनों में की गयी साधना, पूजापाठ से सकारात्मक भाव पैदा होने से कुसंस्कारी भी देवत्व की ओर अग्रसर होने लगते है। कामकाज के द्वन्दों से क्लांत मन दुःख, अवसाद, चिंता, आदि से कोसो दूर होकर परम शांति का अनुभव करता है।

नवरात्रि के नौ दिनों में कई गई लगातार उपासना से हमारे शरीर मे स्थित सातों चक्र निरंतर अभ्यास से जाग्रत हो जाते है। और हमारी चेतना उर्ध्वगामी हो जाती है। सामान्य रूप से अधिकांश लोगो की चेतना केवल मूलाधार चक्र में ही अटकी होने कारण सहस्त्रधार चक्र में स्थित नही हो पाती जिसके फलस्वरूप वे केवल जीवनपर्यत भोग विलास में पशुवत लिप्त रहकर ही इस संसार से विदा ले लेते है। जबकि भगवती के सच्चे उपासक इन नौ दिनों में पूरा समय व्रत, शक्ति संवर्धन व आत्मावलोकन में ही व्यतीत करते है।

नवरात्रि में सामान्य लोग भी व्रत करते है पर वे पूजा पाठ, नाना प्रकार के भोग लगाकर हो अपने कर्तव्य की इतिश्री समझ लेते है। पूजा समाप्त करते ही पर –निन्दा करने में दूसरे का अहित करने में जरा भी नही हिचकते, यही नही दूसरे को गिराकर स्वयं आगे बढ़कर अपने अहम को बढ़ चढ़ कर पोषित करने में शान समझते है। पर वे यह समझ नही पाते कि उपवास का वास्तविक अर्थ क्या है । उप वास का अर्थ है समीप में रहना। अब विचारणीय प्रश्न है किसके समीप रहना ?।

उपवास का वास्तविक अर्थ है व्रत में लगातार भगवान के सानिध्य में रहना, भजन पूजन, करते हुए एकाग्रचित से हृदय की कलुषता को दूर करके चित्त को पूर्णतः परिमार्जित करना ही वास्तविक उपवास है । मनसा वाचा कर्मणा किसी की दुख न पहुंचाना ही उपवास है । किसी का अहित करना पाप कहा गया है ।

विद्वानो द्वारा यह स्पष्ट रूप से बड़ी सरलता से पाप व पुण्य को परिभाषित किया है ।

**अष्टादश पुराणेषु व्यासस्य वचनद्वयम।**
**परोपकार पुण्याय, पापाय परपीड़नम।**

सामान्य रूप से भी, झूठ बोलना, धोखा देना, जानबूझ कर दूसरे का अहित करना, पाप की श्रेणी के अर्न्तगत माना जाता है। और पाप का फल तो अवश्य ही भोगना होता है। और व्रत उपवास के दौरान अनजाने में किये गए पापकर्म भी सदा अक्षम्य होते है। तो जरा सोचिए जो कर्म केवल ओर केवल दूसरे का अहित करने के लिए व्यक्ति करता है उनका फल कैसा होगा। विद्वानो की इस संदर्भ में उक्ति भी चिंतन के योग्य है –

आमरणात शल्यम किम ?

**प्रछन्नम यत कृतं अहितं / पापम ।**

आजीवन हृदय में चुभने वाला कांटा कौन सा है । यदि किसी व्यक्तिने किसी का जानबूझ कर अहित किया है या कोई अन्य पाप कर्म छिप कर किया है तो वही अहित कर्म जीवन भर स्वयं उसी के अंतर्मन में कांटे की तरह चुभता है। क्योंकि व्यक्ति औरों को तो धोखा दे सकता है पर अपने अंतर्मन का क्या करे? जो उसके उस कर्म का साक्षी है । इसी लिए नवरात्रि का समय हमे कलुषित मनो वृतियों का दमन कर के चित्त को निर्मल व सरलचित्त बन। ने का संदेश देता है ।

नवरात्रिके दिनों में जो भी व्रत उपवास के अतिरिक्त नियम व विधि विधान बताए गए है उनके पीछे का रहस्य क्या है । उन विधि विधानों के द्वारा हमारे प्राचीन ऋषि ,मुनियों ने पीढ़ी दर पीढ़ी क्या संदेश दिया। आज में उसी की चर्चा विस्तार से करना चाहूंगी। हमारी यह सृष्टि पंच तत्वों–आकाश, वायु, अग्नि,जल पृथ्वी से मिलकर बनी है। यही बात स्मरण रखने के लिए प्रायः सभी व्रत उपवास के कुछ नियम बनाये गए है। चूंकि आज विषय नवरात्रि का है तो हम उसी के विधि विधान के औचित्य पर दृष्टिपात करेंगे।

यह सर्व विदित है कि नवरात्रि के पहले दिन घट स्थापना होती है। कोरी मिट्टी के मटके को जलपूरित करके पांच पल्लव रखकर नारियल रखने का विधान है। आज हम इसका औचित्य जानेंगे। पूजा में सर्वप्रथम जलाए जाने वाला दीपक अज्ञान का अंधकार हटाकर ज्ञान के आलोक से हमे प्रकाशित करने का द्योतक है। मिट्टी का कलश हमारे अपने शरीर का द्योतक है जैसे मिट्टी का पात्र हल्की सी भी ठसक से टूट जाता है ठीक उसी प्रकार से हमारा शरीर भी क्षण भंगुर है। और मिट्टी का पात्र जीवन की क्षण भंगुरता का द्योतक है। उसमें जो जल भरने का विधान है वह हमारे

जीवन के लिए जल कितना आवश्यक है यही बताता है और साथ ही प्रकृति के जल तत्व का प्रतिनिधित्व करता है।

रहीम ने इसे –रहिमन पानी रखिये बिन पानी सब सून कहकर पानी का महत्व दर्शाया है।

साथ ही मनीषियों का स्पष्ट संकेत इस ओर भी था कि हमारे शरीर का निर्माण जिन तत्वों से मिलकर बना है उसमें सबसे अधिक मात्रा जल की है। परोक्ष रूप में जल से भरा पात्र के विधान के रूप में प्राचीन ऋषियों द्वारा हमे जल संरक्षण का संदेश दिया गया है।

देवी को नारियल चढ़ाने का जो विधान है ।इसका प्रतीकार्थक है – हे देवी ! जीवन के समस्त समस्याओं से जूझने के लिए मेरा शरीर नारियल के आवरण की तरह कठोर व मजबूत बनाओ पर मेरा चित्त सदा नारियल के भीतरी भाग सदृश तरलता ( प्रेम ) से युक्त हो।

कलश पर रखे पांच पल्लव प्रकृति संरक्षण की ओर स्पष्ट संकेत करते है ।कि धर्मिक अनुष्ठानों को विधि वत करने की प्रथम शर्त है कि आपको प्रकृति संरक्षण करना होगा ।वरना पेड़ नही तो हरियाली नही, हरियाली नही तो वायु नही,वायु नही तो जीवन की कल्पना करना असंभव है ।। आशा है अभी पिछले दिनों करोना काल में आक्सीजन की कमी के कारण तड़प कर प्राण त्यागने वाले लोगो को आप नही भूल पाए होंगे। ।

इसी प्रकार काले तिल द्वारा देवी के समक्ष यज्ञाहुति से भी यही तात्पर्य है कि हम अपने मन का कलुषय, मलिनता देवी आप के सामने अग्नि में जलाकर स्वयं निर्मल चित्त बनना चाहते है।

देवी की प्रसन्नता के लिए सभी देवी के पाठ करते है। पर उसमें छिपा लाक्षणिक अर्थ भी यही है –देवी ने संसार को पीड़ित करने वाले समस्त राक्षसों का संहार किया ।लेकिन अब वर्तमान में राक्षस कहाँ है ? यदि दुष्ट प्रवृति वालो को राक्षस रूप में स्वीकार भी कर लिया जाए तो वर्तमान में आपको उनके संहार का अधिकार नहीं प्राप्त हो सकता। ऐसी स्थिति मे एक और लाक्षणिक अर्थ से सब कुछ स्पष्ट दिखाई देता है – वर्तमान में ये शत्रु समाज मे व्याप्त न होकर घट –घट (प्रत्येक शरीर) वासी हो गए है। हमे अपने शरीर मे स्थित काम, क्रोध, लोभ, मद (अहंकार) ईर्ष्या, मात्सर्य, छल प्रपंच, वंचना आदि का स्वयं दमन करना होगा। यदि हम इनका दमन करने में सफल रहे तो यही नवरात्रि के उपवास की सार्थकता होगी ।

नवरात्रि के अलावा भी प्रत्येक क्षण जीवन की क्षण भंगुरता का चिंतन करते हुए अपने पद, प्रतिष्ठा, रुपया पैसा, धन दौलत का अभिमान न करते हुए सदा ईश्वर का स्मरण करें क्योंकि –

**क्षण भंगुर जीवन की कालिका ।**
**कल प्रातः को जाने खिले न खिले ।**
**तू राम भजन कर री रसना (जिह्वा)**
**अंत समय मे हिले न हिले ।।**

# माँ दुर्गा के दोहे

**प्रो. डॉ. शरद नारायण खरे**
प्राचार्य
शासकीय जेएमसी महिला महाविद्यालय
मंडला (म.प्र.)

दुर्गा माँ तुम आ गई, हरने को हर पाप।
संभव सब कुछ आपको, तेरा अतुलित ताप।।

सद्चिंतन तजकर हुआ, मानव गरिमाहीन।
दुर्गा माँ दुर्गुण हरो, सचमुच मानव दीन।।

छोटी–छोटी बच्चियाँ, हैं तेरा ही रूप।
उन पर भी तुम ध्यान दो, बाँट सुरक्षा–धूप।।

हम सब हैं तेरा सृजन, तू सचमुच अभिराम।
दुर्गा माँ तेरे सदा, हैं नित नव आयाम।।

वे पल पावन हो गए, जिनमें तेरा नाम।
यह जग तेरा है सदा, दुर्गा पावन धाम।।

दुर्गा माँ तुमने किया, मार असुर कल्याण।
नौ रूपों में तुम रहो, पापी खाते बाण।।

सिंहवाहिनी दिव्य तुम, हम सब तेरे लाल।
दर्शन दो,हे माँ! करो, हमको आज निहाल।।

वैसे तो तुम वर्ष भर, देती हो उजियार।
इसीलिए पाया नहीं, कभी पुत्र यह हार।।

असुर मारकर धर्म को, खूब किया आबाद।
सबके जीवन से दिया, मिटा सकल अवसाद।।

हे माँ जगदम्बे! नमन्, विनती बारम्बार।
दिया आपने विश्व को, दिव्य, नवल उपहार।।

09 अप्रैल पर विशेष

राहुल सांकृत्यायन जयंती

# भागो नहीं दुनिया को बदलो

**कृष्ण कुमार यादव**
भारतीय डाक सेवा,
पोस्टमास्टर जनरल, वाराणसी परिक्षेत्र
वाराणसी, उत्तर प्रदेश

21वीं सदी के इस दौर में जब संचार-क्रान्ति के साधनों ने समग्र विश्व को एक 'ग्लोबल विलेज' में परिवर्तित कर दिया हो एवम् इण्टरनेट द्वारा ज्ञान का समूचा संसार क्षण भर में एक क्लिक पर सामने उपलब्ध हो, ऐसे में यह अनुमान लगाना कि कोई व्यक्ति दुर्लभ ग्रन्थों की खोज में हजारों मील दूर पहाड़ों व नदियों के बीच भटकने के बाद, उन ग्रन्थों को खच्चरों पर लादकर अपने देश में लाए, रोमांचक लगता है। पर ऐसे ही थे-भारतीय मनीषा के अग्रणी विचारक, साम्यवादी चिन्तक, सामाजिक क्रान्ति के अग्रदूत, सार्वदेशिक दृष्टि एवं घुमक्कड़ी प्रवृत्ति के महान पुरूष महापण्डित राहुल सांकृत्यायन।

उत्तर प्रदेश के आजमगढ़ जिले में निजामाबाद तहसील अन्तर्गत पन्दहा गाँव में अपने नाना पं. रामशरण पाठक के यहाँ 9 अप्रैल, 1893 को जन्मे राहुल सांकृत्यायन का पैतृक गाँव कनैला रहा, पर इनका लालन-पालन एवं शिक्षा-दीक्षा ननिहाल में ही हुआ। चूँकि नाना पं. रामशरण पाठक एक अनुशासन प्रिय सैनिक थे, सो राहुल पर अनुशासन का गहरा प्रभाव पड़ा। इनके बचपन का नाम केदारनाथ पाण्डे था। माता का नाम कुलवन्ती देवी एवं पिता का नाम गोवर्धन पाण्डे था। सन् 1898 में राहुल जी की शिक्षा प्राथमिक पाठशाला, रानी की सराय में आरम्भ हुई एवं सन् 1908 में उर्दू मिडिल की परीक्षा निजामाबाद के मिडिल स्कूल से उत्तीर्ण की। राहुल ने निजामाबाद के ऐतिहासिक महत्व को रेखांकित करते हुए लिखा है कि- ''एक समय वह था जब निजामाबाद में सम्राट अकबर ने कई महीने बिताए। अपने जन्म दिन के उपलक्ष्य में सोने के रत्नों के तुलादान किए।'' हिन्दी के युग प्रवर्तक कवि अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' की जन्म स्थली और कृष्ण प्रसाद गौड़ (बेढ़ब बनारसी) का ननिहाल भी यहीं रहा है। राहुल का विवाह 11 वर्ष की अल्पायु में ही रामदुलारी से कर दिया गया। 19

वर्ष की आयु में राहुल का सम्पर्क सरसा जिले के एक मठाधीश से हुआ और वो उनके शिष्य होकर साधु बन गये एवं अपना नाम 'रामोदर साधु' रख लिया। इसके बाद ही उन्होंने अपना वैराग्य और घुमक्कड़ी जीवन आरम्भ कर दिया।

मानवेन्द्र नाथ राय और आचार्य नरेन्द्र देव सरीखे दार्शनिक व चिन्तकों की कड़ी के ही एक मजबूत स्तम्भ थे– राहुल सांकृत्यायन। भारतीय अध्यात्म से लेकर मार्क्सवाद तक पर गहरी पकड़ रखने वाले इन मनीषियों की चिन्ता मात्र दुनिया को समझने व उसका विश्लेषण करने तक सीमित नहीं थी, वरन् अपनी अदभुत मेधा की बदौलत वे दुनिया को बदलने का सपना भी देखते थे। राहुल सांकृत्यायन की पुस्तक **'भागो नहीं दुनिया को बदलो'** इसी कल्पना को मूर्त रूप देती नजर आती है। भारतीय समाज में व्याप्त अन्तर्विरोधों की व्याख्या करते हुए समाजवादी समाज का विकल्प प्रस्तुत करती यह पुस्तक किसी 'कम्युनिस्ट मेनिफेस्टो' से कमतर नहीं है एवम् आज भी साम्यवादी और समाजवादी आन्दोलनों से जुड़े तमाम लोग इस पुस्तक से प्रेरणा पाते हैं। यह पुस्तक राहुल की जनसामान्य के प्रति अटूट निष्ठा और तथाकथित अभिजात्य व शिक्षित वर्ग एवं राजनीतिज्ञों के प्रति सन्देह भी व्यक्त करती है। इस पुस्तक की भूमिका में उनके शब्द गौरतलब हैं– ''राजनीति को थोड़े पढ़े–लखे आदमियों के हाथ में देकर अब चुप नहीं बैठा जा सकता। ऐसा करने से जनता को बराबर नुकसान उठाना पड़ा। जनता को वोट देने का अधिकार दे देने से काम नहीं चलेगा, उसे अपनी भलाई–बुराई भी मालूम होनी चाहिये और यह मालूम होना चाहिए कि राजनीति के अखाड़े में कैसे दाँव–पेंच खेले जाते हैं।''

राहुल सांकृत्यायन उस दौर की उपज थे जब ब्रिटिश शासन के अन्तर्गत भारतीय समाज, संस्कृति अर्थव्यवस्था और राजनीति सभी संक्रमणकालीन दौर से गुजर रहे थे। वह दौर समाज सुधारकों का था एवं कांग्रेस अभी शैशवावस्था में थी। इन सब से राहुल अप्रभावित न रह सके एवं अपनी जिज्ञासु व घुमक्कड़ प्रवृत्ति के चलते घर–बार त्याग कर साधु वेषधारी सन्यासी से लेकर वेदान्ती, आर्यसमाजी व किसान नेता एवं बौद्ध भिक्षु से लेकर साम्यवादी चिन्तक तक का लम्बा सफर तय किया। सन् 1930 में श्रीलंका जाकर वे बौद्ध धर्म में दीक्षित हो गये एवं तभी से वे 'रामोदर साधु' से 'राहुल' हो गये और सांकृत्य गोत्र के कारण सांकृत्यायन कहलाये। उनकी अद्भुत तर्कशक्ति और अनुपम ज्ञान भण्डार को देखकर काशी के पंडितों ने महापंडित की उपाधि दी एवं इस प्रकार वे केदारनाथ पाण्डे से महापंडित राहुल सांकृत्यायन हो गये। सन् 1937 में रूस के लेनिनग्राद में एक स्कूल में उन्होंने संस्कृत अध्यापक की नौकरी कर ली और उसी दौरान ऐलेना नामक महिला से दूसरी शादी कर ली, जिससे उन्हें इगोर राहुलोविच नामक पुत्र–रत्न प्राप्त हुआ। छत्तीस भाषाओं के ज्ञाता राहुल ने उपन्यास, निबंध, कहानी, आत्मकथा, संस्मरण व जीवनी आदि विधाओं में साहित्य सृजन किया परन्तु अधिकांश साहित्य हिन्दी में ही रचा। राहुल तथ्यान्वेषी व जिज्ञासु प्रवृत्ति के थे सो उन्होंने हर धर्म के ग्रन्थों का गहन अध्ययन किया। अपनी दक्षिण भारत यात्रा के दौरान संस्कृत–ग्रंथों, तिब्बत प्रवास के दौरान पालि–ग्रन्थों को लाहौर यात्रा के दौरान अरबी भाषा सीखकर इस्लामी धर्म ग्रन्थों का अध्ययन किया। निश्चितत: राहुल सांकृत्यायन की मेधा को साहित्य, अध्यात्म, ज्योतिष, विज्ञान, इतिहास, समाज शास्त्र, राजनीति, भाषा, संस्कृति, धर्म एवम् दर्शन के टुकड़ों में बाँटकर नहीं देखा जा सकता वरन् वह तो समग्र भारतीयता के मूर्त रूप थे। यही कारण था कि उन्होंने भावी भारतीय राष्ट्र एवं वैश्विक व्यवस्था की कल्पना उस दौर में कर ली और सन् 1922–23 में हजारीबाग जेल में निरूद्ध रहने के दौरान उन्होंने अपनी प्रथम पुस्तक **'बाईसवीं सदी'** लिखी।

**राहुल सांकृत्यायन के व्यक्तित्व का एक प्रमुख पक्ष भारतीय समाज की विशिष्टताओं को आत्मसात् कर चलना रहा है। जहाँ उचित परम्पराओं को उन्होंने तार्किक–विश्लेषण के आधार पर सिद्ध किया वहीं विभेदकारी और अंधविश्वासी परम्पराओं मसलन– सामंतवाद, ब्राह्मणवाद, जातिवाद, अस्पृश्यतावाद, मायावाद, पुनर्जन्मवाद, धार्मिक अंधविश्वासों इत्यादि का तीव्र विरोध किया। राहुल ने जीवन भर जड़ता के विरूद्ध ऐसी प्रगतिशील– ऐतिहासिक शक्तियों का आह्वान किया जिससे नया मनुष्य और नयी समाज व्यवस्था गढ़ी जा सके। उनका चिन्तन मात्र किताबी नहीं था वरन् जन साधारण को केन्द्र में रखकर उन्होंने समाज को बदलने की कोशिश की। इसीलिए राहुल अपने साहित्य, दर्शन, इतिहास और राजनैतिक चिन्तन को अभिजात्य वर्ग की तरह बौद्धिक बहस के रूप में नही वरन् जीवन–सापेक्ष बनाकर लोक संस्कृति से जोड़ते हैं। उनका धर्म रूढ़ियों और कर्मकाण्डों पर आधारित न होकर सहज करूणा, प्रेम व मैत्री भाव पर आधारित है।**

कभी–कभी राहुल सांकृत्यायन के व्यक्तित्व पर यह प्रश्नचिन्ह भी लगाया जाता है कि वे जीवन में कभी भी स्थायित्व को न प्राप्त कर सके। चाहे वह उनकी पारिवारिक जिन्दगी में तीन शादियों का सवाल हो (सन् 1949 में राहुल ने तीसरी शादी कमला से की, जिससे उन्हें जया और जेती नामक पुत्री व पुत्र उत्पन्न हुए) या फिर वेदान्ती से साम्यवादी तक का सफर। राहुल के जीवन का मूलमंत्र ही घुमक्कड़ी यानी गतिशीलता रही है। घुमक्कड़ी उनके लिए वृत्ति नहीं वरन् धर्म था। तीसरी कक्षा की पढ़ाई के दौरान ही राहुल ने इस्माइल मेरठी की ये पंक्तियाँ पढ़ीं और उसे अपने जीवन में आत्मसात् कर लिया–

**सैर कर दुनिया की गाफिल, जिन्दगानी फिर कहाँ?**

**जिन्दगी गर कुछ रही, तो नौजवानी फिर कहाँ?**

राहुल का समग्र जीवन ही रचनाधर्मिता की यात्रा थी। जहाँ भी वे गए वहाँ की भाषा व बोलियों को सीखा और इस तरह वहाँ के लोगों में घुलमिल कर वहाँ की संस्कृति, समाज व साहित्य का गूढ़ अध्ययन किया। उनका मानना था कि घुमक्कड़ी मानव–मन की मुक्ति का साधन होने के साथ–साथ अपने क्षितिज विस्तार का भी साधन है। उन्होंने कहा भी था कि– "कमर बाँध लो भावी घुमक्कड़ों, संसार तुम्हारे स्वागत के लिए बेकरार है।'' राहुल ने अपनी यात्रा के अनुभवों को आत्मसात् करते हुए 'घुमक्कड़ शास्त्र'

भी रचा। वे एक ऐसे घुमक्कड़ थे जो सच्चे ज्ञान की तलाश में था और जब भी सच को दबाने की कोशिश की गई तो वह बागी हो गया। उनका सम्पूर्ण जीवन अन्तर्विरोधों से भरा पड़ा है। वेदान्त के अध्ययन पश्चात जब उन्होंने मंदिरों में बलि चढ़ाने की परम्परा के विरूद्ध व्याख्यान दिया तो अयोध्या के सनातनी पुरोहित उन पर लाठी लेकर टूट पड़े। बौद्ध धर्म स्वीकार करने के बावजूद वह इसके 'पुनर्जन्मवाद' को नहीं स्वीकार पाए। बाद में जब वे मार्क्सवाद की ओर उन्मुख हुए तो उन्होंने तत्कालीन सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी में घुसे सत्तालोलुप सुविधापरस्तों की तीखी आलोचना की और उन्हें आन्दोलन के नष्ट होने का कारण बताया। सन् 1947 में अखिल भारतीय साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष रूप में उन्होंने पहले से छपे भाषण को बोलने से मना कर दिया एवं जो भाषण दिया, वह अल्पसंख्यक संस्कृति एवं भाषाई सवाल पर कम्युनिस्ट पार्टी की नीतियों के विपरीत था। नतीजन पार्टी की सदस्यता से उन्हें वंचित होना पड़ा, पर उनके तेवर फिर भी नहीं बदले। इस कालावधि में वे किसी बंदिश से परे प्रगतिशील लेखन के सरोकारों और तत्कालीन प्रश्नों से लगातार जुड़े रहे। इस बीच मार्क्सवादी विचारधारा को उन्होंने भारतीय समाज की ठोस परिस्थितियों का आकलन करके ही लागू करने पर जोर दिया। अपनी पुस्तक **'वैज्ञानिक भौतिकवाद' एवं 'दर्शन–दिग्दर्शन'** में इस सम्बन्ध में उन्होंने सम्यक प्रकाश डाला। अन्ततः सन् 1953–54 के दौरान पुनः एक बार वे कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य बनाये गये।

एक कर्मयोगी योद्धा की तरह राहुल सांकृत्यायन ने बिहार के किसान–आन्दोलन में भी प्रमुख भूमिका निभाई। सन् 1940 के दौरान किसान–आन्दोलन के सिलसिले में उन्हें एक वर्ष की जेल हुई तो देवली कैम्प के इस जेल–प्रवास के दौरान उन्होंने **'दर्शन–दिग्दर्शन'** ग्रन्थ की रचना कर डाली। 1942 के भारत छोड़ो आन्दोलन के पश्चात जेल से निकलने पर किसान आन्दोलन के उस समय के शीर्ष नेता स्वामी सहजानन्द सरस्वती द्वारा प्रकाशित साप्ताहिक पत्र 'हुंकार' का उन्हें सम्पादक बनाया गया। ब्रिटिश सरकार ने फूट डालो और राज करो की नीति अपनाते हुए गैर कांग्रेसी पत्र–पत्रिकाओं में चार अंकों हेतु 'गुण्डों से लड़िए' शीर्षक से एक विज्ञापन जारी किया। इसमें एक व्यक्ति गाँधी टोपी व जवाहर बण्डी पहने आग लगाता हुआ दिखाया गया था। राहुल सांकृत्यायन ने इस विज्ञापन को छापने से इन्कार कर दिया पर विज्ञापन की मोटी धनराशि देखकर स्वामी सहजानन्द ने इसे छापने पर जोर दिया। अन्ततः राहुल ने अपने को पत्रिका के सम्पादन से ही अलग कर लिया। इसी प्रकार सन् 1940 में 'बिहार प्रान्तीय किसान सभा' के अध्यक्ष रूप में जमींदारां के आतंक की परवाह किए बिना वे किसान सत्याग्रहियों के साथ खेतों में उतर हँसिया लेकर गन्ना काटने लगे। प्रतिरोध स्वरूप जमींदार के लठैतों ने उनके सिर पर वार कर लहुलुहान कर दिया पर वे हिम्मत नहीं हारे। इसी तरह न जाने कितनी बार उन्होंने जनसंघर्षो का सक्रिय नेतृत्व किया और अपनी आवाज को मुखर अभिव्यक्ति दी।

भारतीय साहित्य व संस्कृति में राहुल सांकृत्यायन का योगदान अक्षुण्ण है। चाहे वह तिब्बत से तिब्बती, पाली व संस्कृत के हस्तलिखित ग्रन्थों को बाईस खच्चरों पर लादकर भारत लाने की जीवटता हो अथवा दर्शन, इतिहास, संस्कृति व साहित्य जैसे जटिल बौद्धिक विषयों को जन भाषा और सरल शब्दावली में सर्वसुलभ बनाना हो या अतीतोन्मुखी होने की बजाय खुले दिमाग से अतीत के उदात्त व मानवीय पहलुओं को अपनाना हो एवं विचार धाराओं की जड़ता के विपरीत समाज की वस्तुगत परिस्थितियों व जनसाधारण को अपने चिन्तन का केन्द्र–बिन्दु बनाना हो..... ये सभी विशिष्टतायें राहुल सांकृत्यायन की मेधा की समग्रता की परिचायक हैं। उनका मानना था कि बाहरी क्रान्ति से ज्यादा जरूरी मानसिक क्रान्ति की है। वे एक जगह लिखते हैं कि– ''आज जिस तरह का मानव जाति का ढाँचा दिखाई पड़ता है, असल में सब दोष उसी ढाँचे का है। जब तक यह ढाँचा तोड़कर नया ढाँचा नहीं बनाया जाता, तब तक दुनिया नरक बनी रहेगी। ढाँचा तोड़ना भी एक आदमी के बूते का नहीं है, उसके लिए उन सब लोगों को काम करना है जिनको इस ढाँचे ने आदमी नहीं रहने दिया।'' यही कारण था कि परम्परा विमुखता की बजाय उन्होंने परम्पराओं की प्रासंगिकता व उनके सकारात्मक विकास पर जोर दिया। समाज के उपेक्षित वर्गो के प्रति वे काफी भाव–विह्वल दिखे। पितृसत्तात्मक भारतीय समाज में नारी के साथ भेदभाव और ब्राह्मणवादी समाज में दलितों के साथ भेदभाव व शोषण के विरूद्ध उन्होंने लोगों को जनसामान्य की भाषा में लिखे गये नाटकों, गीतों व लेखों के माध्यम से आन्दोलित किया। जहाँ **'मेहरारून के दुर्दशा'** नामक भोजपुरी नाटक के बहाने उन्होंने सामंती समाज में स्त्री–शोषण को उकेरा वहीं एक साम्यवादी चिंतक के रूप में **'साम्यवाद ही क्यों'** पुस्तक में **'स्त्रियों की परतंत्रता'** नामक लेख में नारी की मुक्ति का पथ साम्यवादी समाज में खोजने का प्रयास किया। भारतीय समाज में नारियों, पिछड़ों, दलितों एवं शूद्रों की दुर्दशा सदैव उनके अन्तर्मन को आन्दोलित करती रही। अपने कहानी संग्रह **''सतमी के बच्चे''** में भी उन्होंने ग्रामीण जीवन में व्याप्त शोषण, छुआछूत और विपन्नता को उजागर किया। अपने एक लेख **''अछूतों को क्या चाहिए?''** में राहुल ने अस्पृश्य दलित जातियों के प्रति सवर्ण जातियों के उपेक्षात्मक व्यवहार की कड़ी निन्दा की। कभी–कभी तो राहुल की रचनाएं पढ़कर प्रेमचन्द की रचनाओं का भ्रम होने लगता है। समाज में लड़का–लड़की के जन्म पर व्याप्त भेद को रेखांकित करते हुए उन्होंने भोजपुरी में लिखा–

**एके माई बाप से एक ही उदरवा में,**
**दूनों के जनमवा भइल रे पुरूखवा।**
**पूत के जनमवा में नाच आ सोहर होला,**
**बेटी के जनम परे सोग रे पुरूखवा।।**

राहुल सांकृत्यायन सदैव घुमक्कड़ ही रहे। उनके शब्दों में– ''समदर्शिता घुमक्कड़ का एकमात्र दृष्टिकोण है और आत्मीयता उसके हरेक बर्ताव का सार।'' यही कारण था कि सारे संसार को अपना घर समझने वाले राहुल सन् 1910 में घर छोड़ने के पश्चात पुनः सन् 1943 में ही अपने ननिहाल पन्दहा पहुँचे। वस्तुतः बचपन में अपने घुमक्कड़ी स्वभाव के कारण पिताजी से मिली डांट के पश्चात उन्होंने प्रण लिया था कि वे अपनी उम्र के पचासवें वर्ष में ही

घर में कदम रखेंगे। चूँकि उनका पालन–पोषण और शिक्षा–दीक्षा ननिहाल में ही हुआ था सो ननिहाल के प्रति ज्यादा स्नेह स्वाभाविक था। बहरहाल जब वे पन्दहा पहुँचे तो कोई उन्हें पहचान न सका पर अन्ततः लोहार नामक एक वृद्ध व्यक्ति ने उन्हें पहचाना और स्नेहासक्ति रूधे कण्ठ से 'कुलवन्ती के पूत केदार' कहकर राहुल को अपनी बाँहों में भर लिया। अपनी जन्मभूमि पर एक बुजुर्ग की परिचित आवाज ने राहुल को भावविभोर कर दिया। उन्होंने अपनी डायरी में इसका उल्लेख भी किया है– ''लाहौर नाना ने जब यह कहा कि 'अरे ई जब भागत जाय ते भगईया गिरत जाय' तब मेरे सामने अपना बचपन नाचने लगा। उन दिनों गाँव के बच्चे छोटी पतली धोती भगई पहना करते थे। गाँववासी बड़े बुजुर्गो का यह भाव देखकर मुझे महसूस होने लगा कि तुलसी बाबा ने यह झूठ कहा है कि–''तुलसी तहां न जाइये, जहाँ जन्म को ठांव, भाव भगति को मरम न जाने धरे पाछिलो नांव''

'भागो नहीं दुनिया को बदलो' विचारधारा वाले राहुल सांकृत्यायन सार्वदेशिक दृष्टि की ऐसी प्रतिभा थे, जिनकी साहित्य, इतिहास, दर्शन संस्कृति सभी पर समान पकड़ थी। विलक्षण व्यक्तित्व के अद्भुत मनीषी, चिन्तक, दार्शनिक, साहित्यकार, लेखक, घुमक्कड़, कर्मयोगी व सामाजिक क्रान्ति के अग्रदूत रूप में राहुल ने जिन्दगी के सभी पक्षों को जिया। यही कारण है कि उनकी रचनाधर्मिता शुद्ध कलावादी साहित्य नहीं है, वरन् वह समाज, सभ्यता, संस्कृति, इतिहास, विज्ञान, धर्म, दर्शन इत्यादि से अनुप्राणित है जो रूढ़ धारणाओं पर कुठाराघात करती है तथा जीवन–सापेक्ष बनकर समाज की प्रगतिशील शक्तियों को संगठित कर संघर्ष एवं गतिशीलता की राह दिखाती है। ऐसे मनीषी को अपने जीवन के अंतिम दिनों में 'स्मृति लोप' जैसी अवस्था से गुजरना पड़ा एवं इलाज हेतु उन्हें मास्को भी ले जाया गया। पर घुमक्कडी को कौन बाँध पाया है, सो मार्च 1963 में वे पुनः मास्को से दिल्ली आ गए और 14 अप्रैल, 1963 को सत्तर वर्ष की आयु में सन्यास से साम्यवाद तक का उनका सफर पूरा हो गया पर उनका जीवन दर्शन और घुमक्कड़ी स्वभाव आज भी हमारे बीच जीवित है।

**सार्थक और प्रभावी उपदेश वह है,जो वाणी से नहीं, अपने आचरण से प्रस्तुत किया जाता हैं।**

**डॉ. सुमन मिश्रा**
झांसी

मौन हुई अन्तस् की पीड़ा, प्रणय मिलन का सपना टूटा।
प्रिये ! आज में तुम्हें खोजती, हृदय वेदना का स्वर फूटा।।

अब तो मुझको बैठ विजन में, अपने दर्द छुपाने होंगे।
और भाव के अतल सिन्धु में, अपने स्वप्न डुबाने होंगे।।

छुप छुप कर यों आँहें भरना, मेरे बस की बात नही है।
आँसू से समझौता कर लूँ, ये भी तो औकात नही है।।

सागर की लहरों से सीखा,... मर्यादा में ही नित रहना।
ज्वार भले उठते हो उर में, फिर भी पीड़ा को नित सहना।।

स्वाँति बूँद की लिए कामना, प्यासा है चातक मन मेरा।
मृग – तृष्णा में भटक रहा मन, कहाँ लगायेगा वह डेरा।।

एक बार अंतर पट खोलो, याचक बनकर आई हूँ मैं।
'सुमन' हार अर्पण करने को, साधक बनकर आई हूँ मैं।।

मौन निमंत्रण स्वीकारा तो, इन्द्र लोक में वरण करूँगी।
और तुम्हें पाने की खातिर, चंद्र लोक में चरण धरूँगी।।

# आभूषण भारत की सांस्कृतिक श्रेष्ठता के प्रतीक

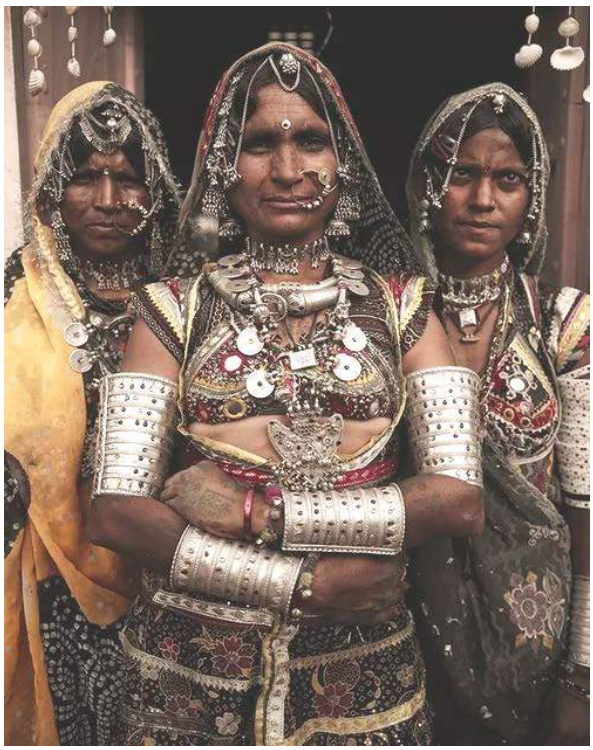

**डॉ. शारदा मेहता**
स्वतंत्र लेखन
ऋषिनगर विस्तार,
उज्जैन (म.प्र.)

नारी के सौन्दर्य में चार चाँद लगाने में आभूषणों का विशेष महत्व है। सदियों से हमारी संस्कृति में स्त्री एवं पुरुष आभूषण धारण करते आ रहे हैं। भारतीय संस्कृति में नारियों के सोलह शृंगार अति प्रसिद्ध हैं जिनमें कई आभूषणों को धारण कर लिया जाता था। आचार्य वल्लभदेव का सोलह शृंगार से संबंधित निम्नलिखित श्लोक प्रसिद्ध है–

**आदौ मञ्जन चीर हार तिलकं नेत्रांजनं कुण्डले,**
**नासा मौक्तिक केशपाश रचना सत्कंचुकं नूपुरौ।।**
**सौगन्ध्य कर कंकणं चरणयो रागो रणन्मेखला,**
**ताम्बूलं करदर्पणं चतुरता शृंगार का षोड़षाः।।**

सारांश यह है कि तिलक, मञ्जन, चीर, काजल, कुण्डल, नासामुक्ता, केश विन्यास, कंचुक, नूपुर, अंगराग, कंकण, चरणराग, करधनी, तांबूल और कर दर्पण ये सभी नारी के सौन्दर्य प्रसाधन हैं।

वैदिक काल में भी महिलाएं आभूषण धारण करती थीं। सामान्यः वे आभूषण सीप, शंख, रंगीन पत्थरों से निर्मित होते थे। उनकी कोई विशेष आकृति नहीं होती थी। वे अनगढ़ होते थे। पक्षियों के पंख, वृक्षों के आकर्षक रंगीन पत्ते आदि से भी महिलाएँ शृंगार करती थीं।

पुरातत्व विभाग द्वारा हड़प्पा तथा मोहनजोदड़ों की खुदाई में प्राप्त अवशेषों में हमें जो आकृतियाँ प्राप्त हुई हैं उनमें महिला तथा पुरुष आकृतियों में हाथ, गले, कमर, सिर आदि अंगों के आभूषण दृष्टिगोचर होते हैं। पत्थरों पर अंकित ये आभूषण तत्कालीन संस्कृति की ओर संकेत करते हैं उस समय भी आभूषण प्रचलन में थे।

सतयुग, त्रेतायुग और द्वापरयुग में भगवान की जो मूर्तियाँ अवशेष रूप में पुरातत्व विभाग को प्राप्त हुई हैं, उनमें पुरुष तथा महिलाओं के सिर से लेकर पैर तक के आभूषण दृष्टिगोचर होते हैं। दोनों ही वर्ग विभिन्न प्रकार के आभूषण धारण करते थे। महिलाओं के विशेष आभूषण

होते थे जिनमें माँग टीका, बोर अँगूठी, सिर की पट्टी, नाक की नथ, पैर के पायल, कड़ी, अँगूठे तथा बिछिया प्रमुख होते थे। हिन्दी साहित्य के महाकवि केशवदास ने अपने ग्रन्थ 'कवि प्रिया' में अपनी नायिका का नखशिख वर्णन करते हुए कहा है–

**बिछिया अनौट बाँके घुँघरू जराय जरी,**
**जेहरी छबीली छुद्र घंटिका की जालिका।**
**मूँदरी उदार पौउची कंकन वलय चूरी कण्ठ,**
**कण्ठमाला हार पहरे गुण कालिका,**
**सीसफूल, कर्णफूल, माँगफूल खुटिला,**
**तिलक नक मोती सौहे बालिका।**
**केसौदास नीलबास ज्योति जग मग रही,**
**देह धरे स्याम संग मानो दीपमालिका।।**

आभूषण विभिन्न धातुओं तथा सामग्रियों से निर्मित किए जाते हैं यथा– सोना, चाँदी, प्लेटिनम, पन्ना, नीलम, माणिक, लाख, गिलेट, मोती, नग, कुन्दन, सीप, शंख, रेशमडोरी, प्लास्टिक, पुष्प, पेपर क्विलिंग, हाथी दाँत, ताम्बा, मिट्टी आदि धातुओं से आकर्षक आभूषण बनाए जाते हैं। कुछ आभूषण तो उत्सव विशेष पर ही पहने जाते हैं। फूलों से निर्मित आभूषण गर्भवती महिलाओं को प्रथम गर्भ के अवसर गोद भराई में पहिनाए जाते हैं। माली इस प्रकार के आभूषण बड़ी कुशलता से निर्मित करते हैं। महाकवि कालिदास रचित 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' में नायिका शकुन्तला पुष्प के आभूषण धारण करती थी।

पशुधन के लिए भी आभूषण बनवाए जाते थे। राजाओं के हाथी तथा घोड़ों को विभिन्न आकर्षक आभूषणों से सजाया जाता था। वर्तमान समय में भी दीपावली के दूसरे दिन गोवर्द्धन पूजन के अवसर पर गाय बैल आदि अन्य पशुओं को विभिन्न रंगों की आकृतियों से सजाया जाता है। उन्हें मोरपंख, रंगीन मोतियों की मालाओं तथा कौड़ियों की मालाओं से सजाया जाता है।

आदिवासियों के आभूषण अलग प्रकार के होते हैं। वे वजन में भारी होते हैं। वे मिश्र धातुओं से बने होते हैं जैसे चाँदी, ताँबा, पीतल, गिलेट आदि अनेक धातुओं से इनका निर्माण किया जाता है। गले में पहने जाने वाले हँसली वजन में भारी होती है। गले में पहने जाने वाले हार चाँदी के सिक्कों की आकृति में बनाए जाते हैं। कर्णाभूषण भी बड़े–बड़े होते हैं। सिर पर एक चौड़ी पट्टी वाला आभूषण तथा हाथों में पहनने के मोटे मोटे कड़े की भी अपनी विशिष्ट पहचान है। हाथों के हथफूल, अँगुलियों की मोटी मोटी अँगूठियाँ, नाक में बड़ी सी नथ, भुजाओं में पहने जाने वाले अलग–अलग आकृतियों के भुजबन्ध, कमर की भारी कमर पट्टी (कदोरा), पैरों के पायल, कड़ी, आयल, घूँघरूदार कड़े, बिछुड़ियाँ, अँगूठे आदि अनेक आभूषण आदिवासी महिलाओं की खूबसूरती में चार चाँद लगाते हैं। उनके वस्त्रों पर भी काँच तथा बड़े–बड़े सितारे जड़े होते हैं। घूँघरुओं से भी वस्त्रों को सजाया जाता है।

महाकविगण तुलसीदासजी तथा सूरदासजी ने श्रीराम तथा श्रीकृष्ण की बाल्यावस्था का उनके द्वारा पहने जाने वाले आभूषणों का वर्णन बड़े ही रोचक ढंग से किया है। पाठकों की आँखों के समक्ष सुन्दर आभूषण पहने बालकों का नयनाभिराम दृश्य उपस्थित हो जाता है–

महाकवि तुलसीदासजी श्रीरामचरितमानस में लिखते हैं–

**भुज बिसाल भूषण जुन भारी। हियँ हरि नख अति सोभा रूरी।**
**उर मनिहार पदिक की सोभा। विप्र चरन देखत मन लोभा।।**

*(श्रीरामचरितमानस बालकाण्ड दोहा १९८/३)*

महाकवि सूरदासजी अपने महाकाव्य 'सूरसागर' में श्रीकृष्णजी के बाल्यावस्था के आभूषण का वर्णन करते हुए कहते हैं–

**'कबहुँ रुनझुन चलत घट रुनि धूरि धूसर गात।**

श्रीकृष्ण धूल से सने अंगों से पैर की पैंजनिया बजाते हुए घुटने–घुटने चल रहे हैं। रावण सीताजी को किस मार्ग से लंका की ओर ले गया इस बात की पहचान सुग्रीव द्वारा श्रीराम को सीताजी द्वारा जमीन पर फेंकी गई आभूषणों की पोटली (गठरी) से ही की गई थी। लक्ष्मणजी ने सीताजी के पैर के आभूषण पहचान लिए थे क्योंकि वे प्रतिदिन सीता माता के चरणों को नमन करते थे। लंका में अशोक वाटिका में बैठी सीताजी हनुमानजी को श्रीरामजी का असली दूत के रूप में तब पहचान पाई जब हनुमानजी ने मुद्रिका उनके सामने रखी–

**'रामदूत मैं मातु जानकी। सत्य सपथकरुणानिधान की।**
**यह मुद्रिका मातु मैं आनी। दीन्हि राम तुम्ह कहँ सहिदानी।।'**

*(श्रीरामचरितमानस सुन्दरकाण्ड दो. १२/१०)*

मुद्रिका देखकर सीताजी के मन में विश्वास उत्पन्न हो जाता है–

**कपि के वचन सप्रेम सुनि उपजा मन विस्वास।**
**जाना मन क्रम वचन यह कृपासिन्धुकर दास।।**

*(श्रीरामचरित मानस सुन्दरकाण्ड दो. १३)*

महाभारतकाल में महाराज युधिष्ठिर की अनेक दासियाँ थीं। वे सभी आभूषणों से विभूषित रहती थीं। उनके हाथों में शंख निर्मित चूड़ियाँ, गले में सुवर्ण हार, भुजाओं में बाजूबन्द और कंठ में स्वर्ण हार आदि बहुमूल्य आभूषण पहने हुए थे। वे सभी दासियों की अंगकान्ति सुन्दर थी।

महाकवि कालिदासकृत अभिज्ञान शाकुन्तलम् में राजा दुष्यन्त शकुन्तलाको तब पहचान सका जब एक धीवर मछली के उदर से निकली हुई एक अँगूठी राजदरबार में प्रस्तुत करता है। वर्तमान समय में भी दुर्भाग्यवश यदि कोई दुर्घटना घटित होती है तो शव के अंग पर के आभूषणों से पहचान की जाती है। आधार कार्ड या अन्य कोई पहचान पत्र न हो तो आभूषणों के आधार से ही कुछ हद तक पहचान की जा सकती है।

कन्याओं को विवाह में दिए जाने वाले आभूषण स्त्री–धन के अन्तर्गत माने जाते हैं। प्राचीन समय में महिलाएँ आत्मनिर्भर नहीं होती थीं। बैंक, जीवन बीमा, पी.एफ., पी.पी.एफ. तथा म्यूच्यूअल फंड जैसे कोई अन्य बचत की सुविधा भी नहीं होती थीं। ऐसे समय साहूकारों के यहाँ आभूषण गिरवी रख कर या उन्हें विक्रय कर आर्थिक संकट का सामना किया जाता था। आभूषणों को चोरी डकैती से बचाने के लिए उन्हें जमीन में गाड़कर रखा जाता था। इसके लिए मटके या धातुओं से निर्मित गगरे (घड़े) का उपयोग किया जाता था। आज भी कई स्थानों पर गृह निर्माण करते समय नींव की खुदाई करते समय सिक्के, गहने आदि से भरे गगरे प्राप्त होते हैं। भित्ती चित्रों में तथा गुफाओं में प्राप्त मूर्तियों में स्त्री तथा पुरुष विभिन्न आभूषण धारण किए दृष्टिगोचर होते हैं।

अलग–अलग प्रान्तों के आभूषण भिन्न–भिन्न आकृतियों के होते हैं। आकृतियों के आधार पर ही स्थान विशेष की जानकारी प्राप्त हो जाती है। वर्तमान समय में महिलाओं का आभूषणों के प्रति आकर्षण तो विकास की ओर अग्रसर होता हुआ दृष्टिगोचर हो रहा है। इसके साथ ही केश सज्जा एवं नित नवीन आकृतियों के परिधानों ने नकली आभूषणों का आकर्षण बढ़ा दिया है क्योंकि आभूषण और परिधानों का मेचिंग (साम्य) होना अति आवश्यक समझा जा रहा है। पुराने वजनदार आभूषण तो बैंक के लॉकरों की शोभा बढ़ाते हैं और सुरक्षित भी हैं। हल्के वजन के सुन्दर नयनाभिराम आभूषण की माँग दिनोंदिन बढ़ती जा रही है। यह समयानुकूल भी है क्योंकि राह चलते चेन खींचने वाले तथा लूटने वाली गैंग से अपनी आत्मरक्षा करने के लिए महिलाओं का यह रुझान प्रशंसा के योग्य है।

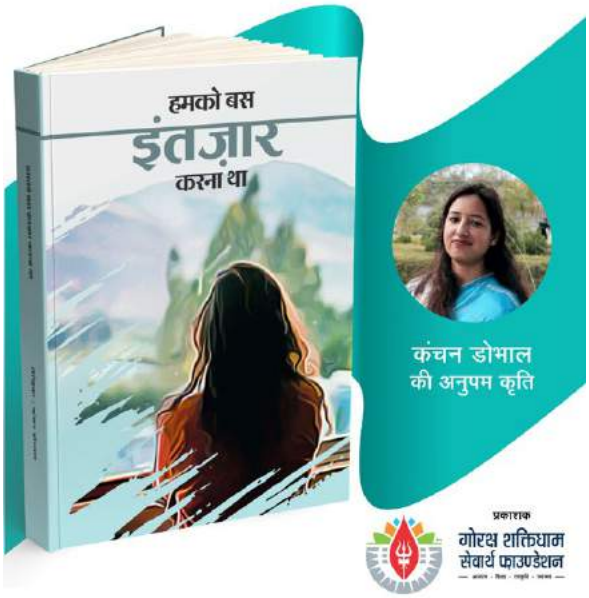

Flipkart amazon पर उपलब्ध

# राष्ट्रीय गौरव के मेरुदंड डॉ. अम्बेडकर

**डॉ. हनुमान प्रसाद उत्तम**
स्वतंत्र लेखन
योग. प्राकृतिक चिकित्सा विशेषज्ञ
(आयुर्वेद रत्न)
कानपुर नगर, उत्तर प्रदेश

इतिहास साक्षी है, वीर प्रसविनी भारत भूमि अनेक वीरों, राजनयिकों एवं युगपुरुषों को अपनी गोद में खिलाती चली आ रही है। भारतमाता अपनी हरित–भरित गोद को संवारती हुई यह आशा एवं कामना करती आ रही है कि भारत विश्व के मंच पर एक सुदृढ़ एवं समुन्नत राष्ट्र के रूप में प्रतिष्ठित हो सके। किंतु अनेक विडंबनाओं को झेलती हुई यह अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में अभी तक सफल नहीं हो सकी है।

स्वतंत्रता के पश्चात भी हमारा देश अनेक वाद–विवाद एवं संघर्षों से घिरा हुआ है वैसे तो भारतीय जनमानस दो तरह के विवाद से तो सदैव ग्रस्त रहा है।

वह संप्रदायवाद हो या फिर जातिवाद। न जाने मानव जाति को हो क्या गया है? जितने युगपुरुष हुए हैं, वे अपने समक्ष समस्त वाद–विवाद का निस्तारण करते हुए नई दिशा एवं चेतना जागृत करके चले गए। हम राजनीतिक एवं सामाजिक दृष्टि तो स्वतंत्र हो गए परंतु यह स्वतंत्रता आज भी हमारे समक्ष एक प्रश्नवाचक चिन्ह की भांति खड़ी है। क्या वस्तुतः हम स्वतंत्र हो गए? जब यह जिज्ञासा मन में उभरती है तो अतीत की स्मृति में अंबेडकर सरीखे युग–पुरुषों का नाम बरबस आ जाता है।

यह तो हमारे संकुचित सोच का परिणाम है कि हम उन्हें किसी वर्ग विशेष का मसीहा कहें। यह कहां तक ठीक है कि जिस व्यक्ति को किसी भी वर्ग विशेष से कोई शत्रुता या मित्रता न रही हो, फिर भी व्यक्तिगत लाभ के उद्देश्य से उन्हें किसी वर्ग विशेष से जोड़ दिया जाए या जो व्यक्ति संपूर्ण हिंदू राष्ट्र को सुदृढ़ एवं समुन्नत बनाना चाहता हो, उसके स्वरूप को उसे

किसी वर्ग विशेष का गौरव कहकर सीमित कर दिया जाए। डॉक्टर अंबेडकर जैसे महामानव तो संपूर्ण मानव जाति के गौरव हैं। अस्तु यह बात अलग-थलग है कि राजनीतिक लाभ लेने के लिए कुछ अवसरवादी एवं समाज के वर्ग विशेष उन्हें स्वयं से जोड़-तोड़ करें।

यदि डॉक्टर अंबेडकर मात्र किसी वर्ग विशेष द्वारा पूजे जाएं या सम्मानित हों या उन्हीं के द्वारा डॉक्टर अंबेडकर जयंती एवं पुण्यतिथि पर नारे लगाए जाएं एवं जुलूस निकाले जाएं तो इससे उनके सम्मान में वृद्धि नहीं होती बल्कि उनके सम्मान को ठेस लगती है क्योंकि जिस प्रकार से उन्होंने समस्त राष्ट्र के लिए तथा दलितों एवं अस्पृष्यों के लिए भी जो कार्य किए वह भी जनमानस में समता लाने की दृष्टि से संपूर्ण देश के हित में किया। इस प्रकार वे समस्त देश के लिए आदरणीय हैं।

आज के परिवेश में उनकी सोच या उनकी कही गई बातों का जो आशय निकाला जा रहा है, अगर देखा जाए तो सही मायने में उनके विचार इसके पूर्णतः पृथक थे। आज उनकी याद में उन्हें ही ढाल बनाकर उनकी छवि धूमिल किया जा रहा है। डॉक्टर भीमराव अंबेडकर जाति- धर्म-संप्रदाय से ऊपर उठकर जनहित में कार्य किए, फिर भी उनके आदर्शवाद की दुहाई देने वाले विभिन्न तथ्यों की आड़ लेकर प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से उनकी उपेक्षा करें, यह कहां तक उचित है?

क्षोभ का विषय है कि उनके बताए गए आदर्श मार्ग का अनुसरण न करके हम अपने आप में भ्रमित होकर उनके सिद्धांतों का सीमित एवं संकुचित अर्थ निकालते हैं। कभी मूर्ति का अनावरण कर दिया या कभी फूल माला से सुसज्जित कर दिया तो कभी पुष्पांजलि या श्रद्धांजलि अर्पित करके जनता को फुसला लिया। राष्ट्रीय गौरव के मेरुदंड एवं भारतीय समाज के अग्रणी नेता सदैव अमर रहेंगे। कोई उन्हें अनावरित करें या आवरण में ही छोड़ दे, वे तो सदैव अपने मुक्त भाव से राष्ट्रीय चेतना के रूप में संपूर्ण भारतीय समाज में छाए हुए हैं। ऐसे में वे किसी वर्ग विशेष के द्वारा अपने या पराए कहे जाएं तो इससे पक्षपात की भावना का ही उदय होता है।

डॉ. अंबेडकर की समाज सेवा की विधा सर्वथा सराहनीय रही है। यद्यपि उन्होंने दलितों एवं अपृष्यों को समाज के सामान्य वर्ग के समकक्ष खड़ा करने का प्रयास किया परंतु फिर भी वे जाति-धर्म-संप्रदाय एवं क्षेत्र से मुक्त होकर कार्य करते रहे। उनके बताए गए आदर्श पर चलना ही उनके लिए सच्ची श्रद्धांजलि है। वास्तविक स्वातंत्र्य के लिए मानवीय चेतना की जो मशाल उन्होंने जलाई, उसे जाज्वल्यमान रखने के लिए मात्र उनके नाम का स्मारक, पार्क, उनकी मूर्तियों की स्थापना या उनके नाम पर मनोरंजन केंद्र बना देना ही पर्याप्त नहीं। मात्र इतने से उनके सिद्धांतों की पुष्टि नहीं होती, न ही यह दलितों के पक्ष में कोई श्रेयस कदम है क्योंकि पार्क, मनोरंजन केन्द्रों का उपयोग मात्र उच्च वर्गों द्वारा ही होता है और फिर इतने से तो उन जैसे महापुरुषों एवं उन जैसे युगपुरुषों को वहीं तक सीमित किया जा सकता है और कुछ नहीं। मनोरंजन केंद्रों एवं पार्कों के स्थान पर यदि विद्यालय, प्राथमिक विद्यालय या विकलांग एवं मूक-वधिर विद्यालय या अनाथालय जैसी संस्थाओं का स्थापना की जाए तो संभवत उनकी सेवा-भावना का सही अर्थ निकाल सके।

लोकतंत्र की स्वस्थ परंपराओं के अनुपालन में हमें अपनी सोच बदलनी होगी एवं तदनुकूल शिक्षा की व्यवस्था करनी होगी एवं हमें अनुशासित होना होगा, तभी भारत में आदर्श अंबेडकर समाज की स्थापना हो सकती है।

डॉ. भीमराव 'अंबेडकर' का नाम ही बड़ा सारगर्भित है। वैसे तो महाराष्ट्र के किसी भी व्यक्ति के मूल का स्पष्टीकरण उनके गांव से हुआ करता है किंतु डॉक्टर अंबेडकर के लिए यह उपनाम उनके व्यक्तित्व को झलकने वाला है। अगर 'अंबेडकर' शब्द को 'अंबेडकर' शब्द के सापेक्ष देखा जाए तो अम्ब का अर्थ है मां, वेद का अर्थ वेदना एवं कर का अर्थ समझाना अर्थात भारत मां की वेदना समझकर जिन्होंने स्वयं को उनकी सेवा में समर्पित कर दिया, वे ही डॉक्टर 'अंबेडकर' थे।

आज के परिवेश एवं आज की सामाजिक एवं राजनीतिक स्थिति से डॉक्टर अंबेडकर के विचारों की तुलना करने पर कई प्रश्न उठ खड़े होते हैं। जैसे, क्या श्रेष्ठ कुल में जन्म भी दलितों के लिए विशेष कार्य इसलिए किया कि आगे चलकर वह स्वार्थ की राजनीति में अवसारवाद का साधन बने? क्या आरक्षण की व्यवस्था उन्होंने इसलिए की कि भविष्य में इससे सामाजिक असंतुलन की स्थिति उत्पन्न हो? या क्या अंबेडकर या उनके नाम पर केवल कुछ वर्ग विशेष या व्यक्ति विशेष का ही अधिकार है? इन उद्वेलित करने वाले प्रश्नों की तह में श्री अंबेडकर के अनुयायियों को आना होगा और सार्थक चिंतन करना होगा तभी शायद व्यर्थ के कोलाहल से श्री अंबेडकर को उभारा जा सकेगा।

**अगर आपको कोई अच्छा लगता है तो अच्छा वो नहीं, बल्कि अच्छे आप हो क्योंकि उसमें अच्छाई देखने वाली नजर आपके पास है।**

17 अप्रैल पर विशेष

# रामनवमी के पावन अवसर पर

**श्रीमती सुषमा सागर मिश्रा**
उपसम्पादक (अध्यात्म संदेश)
सेवानिवृत्त प्रधानाचार्या
राजकीय विद्यालय, लखनऊ

मैं अयोध्या नगरी बोल रही हूं

आप सभी को मेरा प्यार भरा राम राम। मैं आपकी अपनी अयोध्या नगरी बोल रही हूँ, मैं स्वयं को बहुत ही भाग्यशाली मानती हूं क्योंकि मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम के नाम के साथ मेरा नाम जुड़ा हुआ है।आज कल मेरे नाम की चर्चा अपने देश में ही नहीं अपितु विदेशो में भी हो रही है जिसका कारण मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम के मंदिर का नवसृजन है। पहले तो मैं जनमानस से यह सुनकर ही खुश हो लेती थीं कि मेरे प्रांगण में श्री राम जी के भव्य मंदिर का निर्माण होने वाला है मगर अब अपनी आंखों से जन जन के आराध्य श्री राम जी का भव्य मंदिर निर्माण को देखकर परम आनन्द की अनुभूति होती थी, लगभग पांच सौ वर्षो के कठिन संघर्षो के बाद मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान राम के बाल रूप को एक सुंदर और सुसज्जित आसन प्राप्त हुआ था, मेरा हृदय तो हरदम उस अवर्णनीय एवं भावपूर्ण दृश्य हेतु हर पल प्रतीक्षारत था।। इस लेख के माध्यम से मैं श्रीराम के जन्म से लेकर अब तक के अपने हृदय के उद्गारों को आपके साथ साझा करना चाहूंगी मगर इससे भी पूर्व मैं आपको अपना संक्षिप्त परिचय दे दूं तो उचित होगा।

मैं भारत देश के उत्तर प्रदेश राज्य के अति प्राचीन एवं धार्मिक नगरी के रूप में जानी जाती हूं। पवित्र सरजू नदी के किनारे बसे होने कारण मेरा महत्व और भी बढ़ जाता है। मैं श्री राम की जन्म स्थली होने के कारण हिन्दुओं की पूज्य तो रही ही हूं, साथ ही बौद्ध धर्म एवं जैन धर्म के शाश्वत तीर्थ स्थल होने के कारण उनकी श्रद्धा का केंद्र भी रही हूँ। वेदों में मुझे ईश्वर की नगरी बताया गया है, माना जाता है कि मेरी स्थापना सूर्यपुत्र वैवस्वत मनु महाराज ने की थी, यह उस समय की बात है जब मैं सूर्यवंशी राजाओं की राजधानी के रूप में जानी जाती थी और उस समय मेरी संपन्नता की तुलना स्वर्ग से की जाती थी। मुझमें एक विशेष बात है कि मेरे नाम अयोध्या में ब्रह्मा, विष्णु, महेश तीनों का समावेश है मेरा 'अ' कार ब्रह्मा है 'य' कार विष्णु एवं 'ध' कार रूद्र रूप है। मैं इसे अपना सौभाग्य ही मानती हूं कि पूर्व में मैं कौशल देश के नाम से गौरवान्वित होती थी और वर्तमान में भी मैं सब की आस्था का केन्द्र

हूं। मैंने अपने लम्बे जीवन काल में बहुत उतार-चढ़ाव देखे हैं, जहां मेरा अतीत मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम के सुनहरी यादों से जुड़ा हुआ है वही राजवंशी सुल्तानों, मुगलिया बादशाह, और अंग्रेजों के साथ के शासन के साथ भी जुड़ा हुआ है। मैं और पावन नदी सरजू उन अतीत की अनेक सुखद और दुखद घटनाओं के साझीदार गवाह रहे हैं। जाने कितनी ऐसी घटनाएं हैं जिनमें मेरे रुदन के अश्रु सरजू की जलधारा में समाहित हो कर समुद्र का हिस्सा बन चुके हैं। इतिहास गवाह है कि मेरी कभी बनारस के शासक के साथ ठनी तो कभी मगध सम्राट मुझे निगलने को आतुर था परंतु यह मेरी सहृदयता थी कि मैंने कभी किसी से अकारण बैर नहीं किया क्योंकि मेरे हृदय में सब की खुशी देखने की लालसा थी परंतु अफसोस ऐसा हो न सका मेरी भूमि एक बार नहीं अनेकों बार रक्त रंजित होती रही।

मैं साक्षी हूं उन लम्हों की जिसमें श्री राम अपने बाल रूप में अपनी प्यारी लीलाओं से सबको प्रफुल्लित करते थे, मैने किशोर श्रीराम एवं लक्ष्मण को ऋषि विश्वामित्र के साथ राक्षसों के संघार हेतु वन को जाते हुए देखा था, सच पूछें तो उस समय मुझे राजा दशरथ पर बहुत क्रोध आ रहा था जो कि उन्होंने अपने फूल से कोमल राजकुमारों को राक्षसों से युद्ध हेतु भेज दिया था मगर मेरी समस्त शिकायत उस समय आनन्द में बदल गयी थी जब श्रीराम को दूल्हे के रूप में, दुल्हन सीता के साथ और अपने तीनो भाइयों और उनकी दुलहनों के साथ अनोखी बारात के रूप में अयोध्या आगमन के सुन्दर एवं सुखद दृश्य को अपने आंखों से देखा। मैं उस दुखद पल की भी साक्षी जब उनके राजतिलक की एक दिन पूर्व माता कैकई ने राजा दशरथ से वरदान स्वरूप अपने पुत्र भरत को राजगद्दी और चौदह वर्ष के लिए श्री राम का बनवास मांग लिया था यद्यपि श्रीराम ने उसे सहर्ष स्वीकार कर लिया था। उनके साथ उनके लघु भ्राता लक्ष्मण और माता सीता भी वन जाने को तैयार हो गई थी। उनके वन प्रस्थान पर मैं और सम्पूर्ण अयोध्यावासी दुःख के अथाह सागर में डूब गए थे। जहां कल तक मैं एक दुल्हन की तरह सजी हुई थी और मेरे प्रांगण में शहनाई की मधुर धुन गूंज रही थी, वहीं आज शोक का वातावरण पसरा हुआ था। सच कहूं मैं तो शून्य हो चुकी थी तभी पता चला कि श्रीराम के वियोग में राजा दशरथ ने प्राण त्याग दिया, हाय! बिना राजा के मै अनाथ हो गयी थी अब मैं समझ नहीं पा रही थी कि आगे क्या होगा। मैं आज भी जब उन कठिन परिस्थितियों को याद करती हूं तो दुःख के सागर में गोते खाने लगती हूं।

कुछ समय बाद एक आशा जागृत हुई यह जानकर कि भरतजी, जो कि उस समय अपने ननिहाल में थे, वापस आकर और पूरी घटना को जानकर अपनी मां कैकेई पर बहुत नाराज हुए और स्वयं राजसिंहासन को स्वीकार न कर भ्राता श्री राम को मनाने और उन्हें वापस लाने हेतु वन को प्रस्थान करने वाले हैं, मगर श्रीराम ने अपनी रघुकुल रीति का पालन करते हुए उन्हें अपनी खड़ाऊ देकर मेरा और अयोध्या वासियों का ध्यान रखने का आदेश देकर वापस अयोध्या भेज दिया और बहुत सुखद अहसास हुआ था जब श्रीभरत ने भ्राता के प्रति प्रेम एवं सम्मान के वशीभूत होकर अपनी जिम्मेदारियों के निर्वहन का अनूठा एवं अनुसरणीय उदाहरण प्रस्तुत किया। उन्होंने श्रीराम के चरण पादुका को राजसिंहासन पर रखकर स्वयं सेवक की भांति प्रजा की सेवा करना प्रारम्भ कर दिया।

समय अपनी गति से आगे बढ़ चला हम सभी श्रीराम के वापस आने की प्रतीक्षा कर रहे थे, कि तभी सुनने में आया कि लंका का राजा रावण माता सीता को छल से हर ले लिया है, यह सुनकर मैं पुनः शून्य हो गयी। मैं सोचने लगी कि श्रीराम पर पहले ही क्या कम परेशानियां थी जो अब उन्हें पत्नी विछोह का दुःख भी सहना पड़ेगा परन्तु कहीं न कहीं मन में अडिग विश्वास भी था कि मेरे राम और लक्ष्मण अपने पराक्रम से सब ठीक कर लेंगे और अंततः वही हुआ कि रावण और उसके पूरे कुनबे का अंत कर और जीती हुई लंका का राज्य रावण के भाई विभीषण को सौंपकर श्री राम, पत्नी सीता और भाई लक्ष्मण के साथ 14 वर्ष का बनवास पूर्ण कर वापस अयोध्या लौट रहे थे, मुझे तो लग रहा था कि मेरे स्वर्णिम दिन पुनः वापस आ गये। मैं साक्षी हूं उन लम्हों की जब इन्तजार की घड़ियां समाप्त हुई और श्रीराम, अपने अनुज लक्ष्मण और माता सीता के साथ पुष्पक विमान में बैठकर आये और सरयू के तट पर अपने चरणकमल रखे थे, उस दिन मैं और सरयू दोनों ही कृतार्थ हो गए थे। मैं तो अपने आराध्य श्री राम को निहार कर निहाल हो रही थी। खुशी से आल्हादित हो कर मैं अपने रज रुप में उनके बिना चरण पादुका के चरणों में लिपटी जा रही थी। मैं अपने पुराने दुःखों को भूल कर नई खुशियों का इंतजार करने लगी थी। इस उपलक्ष्य पर नगरवासियों ने मुझे विविध पुष्पों एवं दीप मालाओं से सजाया था। आज जहाँ भाई भाई सम्पत्ति के लिए आपस में दुश्मन बन जाते हैं वहीं श्रीभरत ने श्री राम को राज्य की सारी जिम्मेदारी सौंप कर खुद एक सेवक के भांति उनके साथ सहयोग करने का निवेदन किया और जिसे स्वीकार कर श्री राम, माता सीता के साथ सिंहासन पर आरूढ़ हुए और सभी भाई उनका सहयोग करने लगे। श्री राम अपने साथ अपने कठिन समय में साथ देने वाले मित्रों को भी लाए थे जिनमें हनुमान नाम के एक शक्तिशाली बानर भी शामिल था जो कि उनका परम भक्त था। उन्होंने उसे भी राम दरबार में सम्मिलित कर लिया। अब राम दरबार की छटा देखते ही बनती थी। पूरे राज्य में सब सुखी थे, कहीं कोई अपराध नहीं था, धन-धान्य से परिपूर्ण श्रीराम के राज्य काल को 'रामराज्य' के नाम से जाना जाने लगा था मगर सच है कि खुशियों की अवधि बहुत कम होती है।

एक बार पुनः मुझे असीम कष्ट से गुजरना पड़ा जब मैंने जाना कि एक धोबी के कहने पर श्री राम ने माता सीता का परित्याग कर दिया है। उनके आदेश का पालन करते हुए श्री लक्ष्मण जी माता सीताजी को वन में छोड़ आये थे, दुख की बात यह थी कि वह उस समय वे गर्भवती थी और श्री राम के इस कठोर निर्णय से अनभिज्ञ थी। उस समय मुझे राजाराम पर बहुत क्रोध आया था, यदि मेरे पास बोलने की शक्ति होती तो उनसे इसका कारण जरूर पूछती, मगर अफसोस कि मैं केवल महसूस कर सकती थी विरोध करने की शक्ति तो ईश्वर ने मुझे दी ही नहीं थी। फिर यह सोच कर मन

को शान्त किया कि श्रीराम ने जो भी निर्णय लिया है उसमें समाज का कोई न कोई हित अवश्य छिपा होगा। इस घटना के पश्चात मैंने महसूस किया कि सीता माता के वन गमन के बाद से श्री राम बिल्कुल शांत हो गए थे मगर उनके हृदय की पीड़ा उनकी आँखों से परिलक्षित होती थी।

मैं साक्षी हूँ उन पलो की जब श्रीराम ने अपने राज्य का विस्तार किया था, उस समय अयोध्या के आसपास के सभी राज्यों को अपने राज्य में मिला कर राजसूय यज्ञ का आयोजन किया जिसमें उन्होंने अपने बांई ओर माता सीता की स्वर्ण निर्मित मूर्ति को स्थान दिया जो कि सीता के प्रति उनके प्रेम और सम्मान को प्रदर्शित करता था। विशाल यज्ञ का सम्पादन हो ही रहा था चारों ओर खुशी का वातावरण व्याप्त था तभी मैने देखा कि दो छोटे परन्तु दिव्य बालक अपनी वीणा के साथ राम कथा का गायन करते हुए दरबार में आए, वो श्री राम की लीला को अत्यंत संगीतमय रूप से गा रहे थे। वहां पर उपस्थित सभी लोग उनके गायन से प्रभावित हो रहे थे। आश्चर्य की बात थी कि पूरी रामकथा उन्हें जबानी आती थी, इसी कड़ी में उन्होंने अपने गायन के माध्यम से श्रीराम से प्रश्न भी किया कि उन्होंने अपनी निर्दोष पत्नी का त्याग क्यों किया मगर श्रीराम केवल उन्हें निहारते रहे, कोई जवाब नहीं दे पाए और वो बालक कण्ठस्थ राम कथा सुनाकर साथ ही अपने बाल मुख से एक जलता हुआ एवं अनुत्तरित प्रश्न राजा राम और अयोध्या वासियों के लिए छोड़ गए।

एक दिन दुःखद समाचार मिला कि सीता मां ने स्वयं को निष्कलंकित सिद्ध करने हेतु धरती में समाहित कर लिया, मुझे ऐसा लगा कि मैं पुनः अनाथ हो गयी हूं। बिना माता सीता के श्री राम ऐसे लग रहे थे जैसे बिना मणि का सर्प। तभी मैने देखा कि श्रीराम के साथ दो बच्चे थे जो श्री राम और माता सीता के पुत्र थे मगर यह क्या? यह तो बच्चे वही थे जिन्होंने राजसूय यज्ञ में राम कथा गाकर सभी को अचंभित किया था। दोनों बच्चे को पाकर मैं अयोध्या नगरी निहाल हो गयी थी, मुझे जहां माता सीता के जाने का अपार दुःख था वहीं दोनों राजकुमार को पाकर में अपने आप को धन्य समझने लगी थी।

यह कथा मैंने आपको इसलिए सुनाई कि इतिहास के पन्नों की मोटाई बढ़ते बढ़ते कुछ लोग श्री राम की गौरव गाथा पर भी प्रश्नचिन्ह लगाने लगे थे और कुछ नास्तिक उनके अस्तित्व को ही नकारने में लगे हुए थे। मगर मैं साक्षी हूँ उस युग की जिसने मेरे गौरव को चार चांद लगाया। द्वापर युग में महाभारत काल में भी मेरा गौरव शिखर पर था मगर अफसोस कि शनैः शनैः मेरी गरिमा और गौरव अपनी अन्तिम सांसे गिनने लगा था। इतिहास गवाह है कि एक लंबे समयान्तराल के बाद उज्जैन के चक्रवर्ती सम्राट राजा विक्रमादित्य ने एक बार पुनः मेरी गरिमा का संवर्धन करते हुए मेरी पुरानी धरोहरों का जीर्णोद्धार कराया एवं श्री राम जन्म भूमि पर एक विशाल राम मंदिर का निर्माण कराया। मेरे अंतस्तल पर अनेकों कूप, जलाशय, महल, बाग बगीचे का निर्माण करवा कर मेरी सुन्दरता में चार चांद लगा दिया। धीरे धीरे मैं पुनः विकास के मार्ग पर अग्रसर हो चली थी। अब मैं एक महत्वपूर्ण व्यापारिक केन्द्र के रूप में जानी जाने लगी थी अतः मैं सभी के लिए आकर्षण का केंद्र बनती जा रही थी।

बहुत दुख होता है अपने पतन की एक– एक घटना सोचकर, सभी दृश्य किसी चलचित्र की भांति मेरी आंखों के सामने आकर मेरे हृदय को विदीर्ण कर देते हैं। चौदहवी शताब्दी में विदेशी आक्रांताओ के आक्रमण ने मुझे ही नहीं अपितु पूरे भारत वर्ष को तहस नहस किया फिर मैं कैसे बच सकती थी। आक्रमणकारियों ने मुझे जमकर लूटा एवं मुझे नष्ट भ्रष्ट कर दिया, मेरे सौन्दर्य में चार चांद लगाने वाले मंदिरों की भव्य मूर्तियों को तोड़ कर मुझे खंडहर में तब्दील कर दिया, अफसोस कि मेरे पास आंसू बहाने के अलावा कोई चारा भी नहीं था, मेरे साथ रो रही थी पावन सरजू की जल धारा। यद्यपि मेरी रक्षा हेतु कितने धरती पुत्रों ने अपनी जान की बाजी लगा दी, अनेकों बार उनके रक्त से मेरी भूमि रक्तरंजित हुई साथ ही लाल हुआ पावन सरजू नदी का जल और अन्ततः औरंगजेब ने अपने पूर्वज बाबर के सपने को पूरा करने के लिए नष्ट भ्रष्ट राम मंदिर के ऊपर मस्जिद का निर्माण करवा दिया जिसे आमजन बाबरी मस्जिद के नाम से जानते हैं। यह मस्जिद 1992 तक एक शूल की भांति मेरे सीने पर खड़ी रही, यूं तो इस समय अंतराल में मेरे अन्तस्तल पर बहुत सी मस्जिदों का निर्माण हुआ था मगर बाबरी मस्जिद राम जन्मभूमि पर जबरन बनाई थी इसलिए मुझे अपार कष्ट होता था।

आशा थी कि देश की आजादी के बाद मुझे अपना गौरव पुनः प्राप्त होगा मगर ऐसा हो न सका, सबकी श्रद्धा और आस्था के केन्द्र होने के बावजूद भी मैं उपेक्षित ही रही। राजनैतिक पैतरेबाजी का प्रभाव यह रहा कि सभी नेताओ ने अपनी नेतागिरी चमकाने का माध्यम मुझे बना लिया था। 1992 में जब बाबरी मस्जिद पूरी तरह ढहा दी गई थी तो पूरा देश सांप्रदायिकता की आग में झुलसने लगा जहां एक वर्ग मुझ पर अपना अधिकार जमाना चाहता तो वही दूसरा मुझे पुराने गौरव से सुशोभित करना चाहता था। मुझे ऐसा लगता था कि मैं अब भी उस श्रापित भूमि के समान हूँ जहां पर फूल खिलने की कोई आशा शेष नहीं रह गयी थी। सबसे बड़े दुख की बात यह थी कि इस लड़ाई में मेरे आराध्य देव श्री राम के ऊपर से छत भी छीन ली गई थी और उन्हें कोर्ट के अग्रिम आदेश तक तिरपाल के नीचे रख दिया गया था, जिसमें उन्हें जाड़ा, गर्मी, बरसात का प्रकोप सहना पड़ता था। सच कहूं तो मैं उनकी स्थिति देखकर बहुत ही शर्मिंदा होती थीं, मैं सोचती थी कि जन जन के आदर्श मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम जो हर मानव के रोम रोम में बसे हैं, दिन की शुरुआत राम–राम से करने वाले और जीवन के अंतिम समय में भी श्री राम नाम का स्मरण करने वाले लोगों ने उन्हें किस स्थिति में पहुंचा दिया। फिर भी मेरा विश्वास था एक दिन अवश्य ऐसा आयेगा जब मैं उपेक्षा के इस दंश से मुक्त हो जाऊंगी और श्री रामजी का भव्य मंदिर पुनः स्थापित होगा और उसके साथ ही मैं पुनः अपने खोए हुए गौरव एवं वैभव से परिपूर्ण हो जाऊंगी क्योंकि परिवर्तन ही जीवन है।

अपनी राम कथा सुनाते मैं कहीं–कहीं बहुत भावुक हुई हूँ , क्रोधित भी हुई और शर्मिन्दा भी हुई मगर उस दिन मैं बहुत ही

आनन्दित थी जब तमाम अटकलों के बाद ही सही अदालत द्वारा भगवान श्री राम का विशाल मन्दिर बनाने की अनुमति दे दी गई थी और वह बनना शुरू भी हो गया था। मैं भी उत्साहित थी अपने रामलला के मंदिर को बनते देखने के हुए। इतनी त्रासदी झेलने के बाद श्रीराम की अनुकम्पा से अब मेरी असंतुष्ट और दुखी आत्मा को शान्ति मिल सकेगी। अन्ततः रामलला के भव्य मंदिर के निर्माण की पूर्णता एवं उनकी सुन्दर सलोनी बालरुप के स्थापना के पावन अवसर पर एक बार पुनः मुझे मेरे अयोध्या वासियों ने दुल्हन की भांति सजाया था। मेरा अधूरा स्वप्न पूर्ण हो रहा था। मैं अयोध्या उन सभी ज्ञात अज्ञात धरती पुत्रो की हार्दिक आभारी हूं जिनके भागीरथ प्रयास से मैं पुनः अपने खोए हुए गौरव को प्राप्त कर, सकी हूं और विश्व पटल पर मेरा और मेरे भारत का नाम स्वर्णाक्षरों में अंकित हो गया है।

मैं अयोध्या उन सभी को भी धन्यवाद प्रेषित करना चाहूंगी जिन्होंने विपरीत परिस्थितियों और बुरे दिनों में भी मेरे अस्तित्व को जीवित रखा। वो मेरे सम्मान में कभी 'अयोध्या महोत्सव' कभी 'दुर्गा पूजा' कभी 'नवरात्रि महोत्सव' एवं 'अयोध्या भरतकुण्ड महोत्सव' आदि का आयोजन करते रहे थे। मैं सदैव हर उस मानव की कृतज्ञ रहूंगी जिनके अथक प्रयास एवं परिश्रम से मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम का भव्य मंदिर का निर्माण सम्भव हो सका है। ईश्वर से मेरी यही प्रार्थना है कि हमारे देश में सदैव चहुंदिश खुशी और आनंद का वातावरण बना रहे। देश के सभी भाई-बहन भले ही किसी भी धर्म जाति को मानने वाले हों, सभी प्रेम और आत्मीय भाव एवं सौहार्द के साथ हिलमिल कर रहें और देश के विकास में अपना भागीरथ योगदान प्रदान करते रहें क्योंकि देश के विकास में ही हम सबका विकास निहित है। मेरी अभिलाषा है कि हमारा भारत एक बार पुनः श्रीराम के आदर्शों पर चलकर रामराज्य की खूबसूरत परिकल्पना को साकार विश्व में विश्व गुरु के पद पर आसीन हो सके और साथ ही भारत पुनः सोने की चिड़िया बन सके।

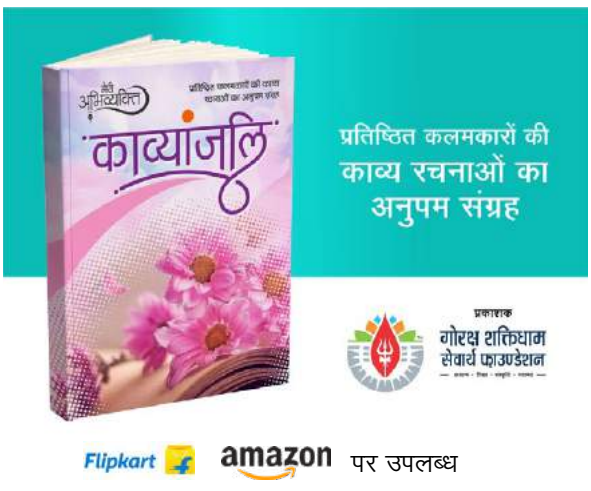

# श्री राम वन्दना

**ब्रह्मेश्वर नाथ मिश्र**
स्वतंत्र लेखन
बिहार

जय राम नमामि नमामि प्रभो,
भव भंजन रंजन ताप हरो ।
जग कारक पालक त्राहि प्रभो,
संहारक तारक पाहि विभो।
हे पाप विमोचन शोक भयम् ,
मद मोह महा तम पुंज हरम् ।
रघुनायक सायक चाप धरम् ,
खल दुष्ट निशाचर नाश करम् ।
अति दीन मलीन दुखी हमहीं,
नहिं संगत संत कियो कबहीं ।
नहिं प्रेम कियो हरि चरनन में,
नहिं नाम लियो प्रभु का मन में ।
तुम दीन दयालु कृपालु प्रभो,
शरणागत पालक पाप हरो।
अब छोड़ कपट छल मोह मदा,
आयो तव शरण हरो बिपदा।
जय राम नमामि नमामि प्रभो,
भव भंजन रंजन ताप हरो।

# बाल साहित्य एवं बच्चों से संवाद

**डॉ. सन्तोष खन्ना**
**(वर्ल्ड रिकॉर्ड होल्डर)**
वरिष्ठ सम्पादक (अध्यात्म संदेश)
वरिष्ठ साहित्यकार एवं प्रधान संपादक :
महिला विधि भारती त्रैमासिक पत्रिका
दिल्ली–110088

बच्चे राष्ट्र के कर्णधार और आधार होते हैं। जिस देश के बच्चे स्वस्थ, शिक्षित एवं संस्कार पूर्ण होते हैं उसका विकास कभी अवरुद्ध नहीं होता है। यदि किसी देश में क्रांति का आवाहन करना हो तो वहां के बच्चों में सच्चाई, स्वाभिमान, साहस, सहनशीलता, समन्वय और सच्चरित्र की भावनाएं भर दीजिए वहां परिवर्तन ऊपर से थोपने की आवश्यकता नहीं होगी, परिवर्तन का रथ स्वयं दौड़ने लगता है। कहा भी है बच्चों की आत्मा को संवारने से देश स्वयं संवर जाता है। अंग्रेजी के महाकवि मिल्टन ने कहा था, 'जैसे प्रातः काल दिन के खुशगवार होने का संदेश है वैसे ही अच्छे बच्चे उन्नत समाज के द्योतक होते हैं।'

प्रत्येक देश का यह दायित्व और कर्तव्य है कि वह बच्चों के सही विकास के लिए भरसक प्रयास करें। हर बच्चे का यह जन्मसिद्ध अधिकार भी है कि उसे शारीरिक, मानसिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक विकास के लिए अनुकूल वातावरण सुलभ किया जाए। बच्चों को अच्छी शिक्षा एवं संस्कार तो मिलने ही चाहिए, उनमें जीवन के प्रति एक स्वस्थ, सकारात्मक एवं रचनात्मक सोच एवं दृष्टिकोण विकसित किया जाना चाहिए ताकि बड़े होकर वह एक बेहतर इंसान बन सके।

सर्वविदित है कि साहित्य समाज का दर्पण होता है। साहित्य एक ऐसे प्रकार का सशक्त साधन है जो समाज में व्याप्त रूढ़िगत पतनोन्मुखी प्रवृत्तियों एवं बुराइयों का उन्मूलन

कर नूतनता का संचार करता है। बच्चों का कोमल मन वैसे ही कल्पनाशील और प्रभाव ग्रहणीय होता है। अच्छे बाल साहित्य के संपर्क में आ उनका जीवन कुंदन बन सकता है। प्रश्न यह पैदा होता है कि क्या वर्तमान युग में ऐसा बाल साहित्य सुलभ है जो बच्चों की संवेदनशील प्रवृति एवं भावनात्मक आवश्यकताओं की प्यास को शांत करने की कसौटी पर खरा उतरता हो।

प्रश्न यह भी है कि क्या वर्तमान परिस्थितियों में बच्चे ऐसे अच्छे बाल साहित्य से संवाद बना सकने की स्थिति में हैं? आजकल उनकी मानसिकता में क्या चल रहा है?

वर्तमान युग उदारीकरण, व्यापारीकरण, बाजारीकरण और उपभोक्तावादी संस्कृति का है। वैज्ञानिक प्रगति ने जीवन की सुख सुविधाओं का अंबार लगा दिया है। प्रौद्योगिकी एवं विशेष रूप से सूचना प्रौद्योगिकी ने विश्व को एक ग्राम में तब्दील कर दिया है। इलेक्ट्रॉनिक मीडिया या यूं कहें कि 24 घंटे अनवरत चलने वाले टेलीविजन चौनलों ने अनाप-शनाप विज्ञापनों और कार्यक्रमों के माध्यम से बच्चे क्या बड़ों की इच्छाओं को बेलगाम कर दिया है। परिणाम यह है कि आज हर व्यक्ति का ध्येय अपने तथा अपने बच्चों के लिए जीवन की अधिकाधिक सुख सुविधाएं जुटाना हो गया है सुख सुविधाएं सब के हिस्से में आती नहीं है तड़पाती अवश्य हैं जिसके कारण घर और बाहर का वातावरण कलुषित हो गया है। बच्चे विज्ञापनों से प्रभावित होकर अपने मां-बाप से वस्तुओं को लेने की जिद अवश्य करते हैं यदि उनकी एक इच्छा पूरी होती है तो दूसरी शुरू हो जाती है। वह इसी आपाधापी में रहते हैं। जिनकी इच्छा पूरी नहीं होती वह उल्टे अवसाद की स्थिति में चले जाते हैं। ऐसे में किसे बाल साहित्य की सुध है। बाल साहित्य यदि अच्छा भी है तो आज के युग में बच्चों का उससे संवाद कहां हो पा रहा है ? प्राय देखा जाता है कि मां-बाप भी प्रायः जंक फूड या शीतल पेय या फिर अन्य वस्तुओं पर अनाप-शनाप खर्च करने को बाध्य हो जाएंगे किंतु बच्चों के लिए बाल साहित्य खरीदने के लिए तत्पर नहीं होते हैं। प्रश्न यह भी है कि बाल साहित्य और बच्चों में संवाद की संभावनाएं कैसे-कैसे तलाशी जाएं। पश्चिमी संस्कृति के प्रांगण में निर्मित बाल कार्यक्रम या कार्टून या अन्य कार्यक्रम यथा सिनेमा, मारधाड़ वाला सिनेमा, हिंसा से भरा सिनेमा, अश्लीलता से भरा सिनेमा, इन सब से कलुषित हुई बाल मनोवृति बाल साहित्य के समीप फटकना भी नहीं चाहती। पश्चिम की संस्कृति को जब शिक्षित अशिक्षित बड़े सब अपना रहे हैं अथवा प्रभावित हो रहे हैं तो बच्चों पर अंकुश कैसे लगाया जाए और कौन लगाएगा उन पर यह अंकुश? वैसे भी जब बड़ों को भी अपने कामों अथवा मोबाइल से फुर्सत नहीं, ऐसे में बच्चों की तरफ किसका ध्यान जायेगा जबकि उनकी ओर हमेशा अतिरिक्त ध्यान देने की आवश्यकता होती है। किसान खेत में बीज डाल देता है, उस खेती को सही तरह से फलने फूलने के लिए समय-समय पर खाद पानी और सेवा की जरूरत होती है।

वैसे हर माता पिता अपने बच्चे से बहुत अधिक प्रेम करते हैं परंतु बच्चों को अच्छे संस्कार देने का सबसे अधिक अच्छा तरीका यह है कि अभिभावक स्वयं अपने जीवन में संयम और अनुशासन अपनायें। बच्चों की सबसे पहली पाठशाला तो परिवार ही होती है। उसका असली व्यक्तित्व तो अभिव्यक्तों की जीवन शैली के अनुरूप ही बनेगा। फिर भी अगर वह लाड़ प्यार में कोई गलती करता है तो उसे यह समझाना जरूरी होगा कि सही क्या है और गलत क्या है। दूसरा, अभिभावक हमेशा चाहते हैं कि उनका बच्चा स्वस्थ और सुखी रहे। बच्चे की खुशियों के लिए वह उनकी लगभग सभी मांगें भी पूरी करना चाहते हैं। इसके अलावा उनके उज्जवल भविष्य के लिए अच्छी शिक्षा दिलाना चाहते हैं। लेकिन अक्सर माता पिता बच्चे के प्रेम में कुछ ऐसी गलतियां कर जाते हैं, जो बच्चे के व्यवहार पर दुष्प्रभाव डालता है। बच्चे के पालन पोषण के दौरान उनकी हर जरूरत को पूरा करने के साथ ही बड़ी छोटी मांगों को पूरा करना, उनकी गलतियों को नजरअंदाज करना, उनके जिद्दी और गुस्सैल रवैए को बिना रोक टोक अपना लेने से बच्चा बिगड़ने लगता है और उसका भविष्य भी खराब होने लगता है। ऐसे में माता पिता को चाहिए कि वह बचपन से बच्चे को संस्कार और अनुशासन सिखाएं, ताकि बच्चा एक आदर्श इंसान, अच्छा बेटा और सफल नागरिक बनें। बच्चे साधारणतया आजकल बाजार में उपलब्ध खाने पीने की वस्तुऐं अधिक पसंद करते हैं जोकि वस्तुतः उनके स्वास्थ्य के लिए तो बहुत हानिकारक होती हैं बच्चों के खान-पान के संबंध में संयम बरतना बहुत जरूरी होता है इस संबंध में बच्चों पर अंकुश लगाना होगा। अगर लाड प्यार के कारण मां-बाप उसे उन सब चीजों को खाने देते हैं जो उसके स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है तो उसके जिम्मेदारी तो मां-बाप पर ही आएगी। बच्चों की जिद के सामने झुकना कभी भी श्रेष्कर नहीं हो सकता। बच्चों को हमेशा बड़ों का आदर सम्मान करना सीखना चाहिए लेकिन उससे पहले यह जरूरी है की मां-बाप अपने व्यवहार से बच्चों के समक्ष ऐसे उदाहरण प्रस्तुत करें ताकि बच्चे उनका अनुसरण करें।

**फल लगने पर वृक्ष की डालिया नीचे की ओर झुक जाती है, वैसे ही सज्जन पुरूष धन और ज्ञान आते ही विनम्र हो जाते हैं।**

# ऐतिहासिक है जोधपुर में मेहरानगढ़ स्थित चामुण्डा देवी का मंदिर

**शत्रुओं से अपने भक्तों की रक्षा करने वाली माँ चामुण्डा देवी**

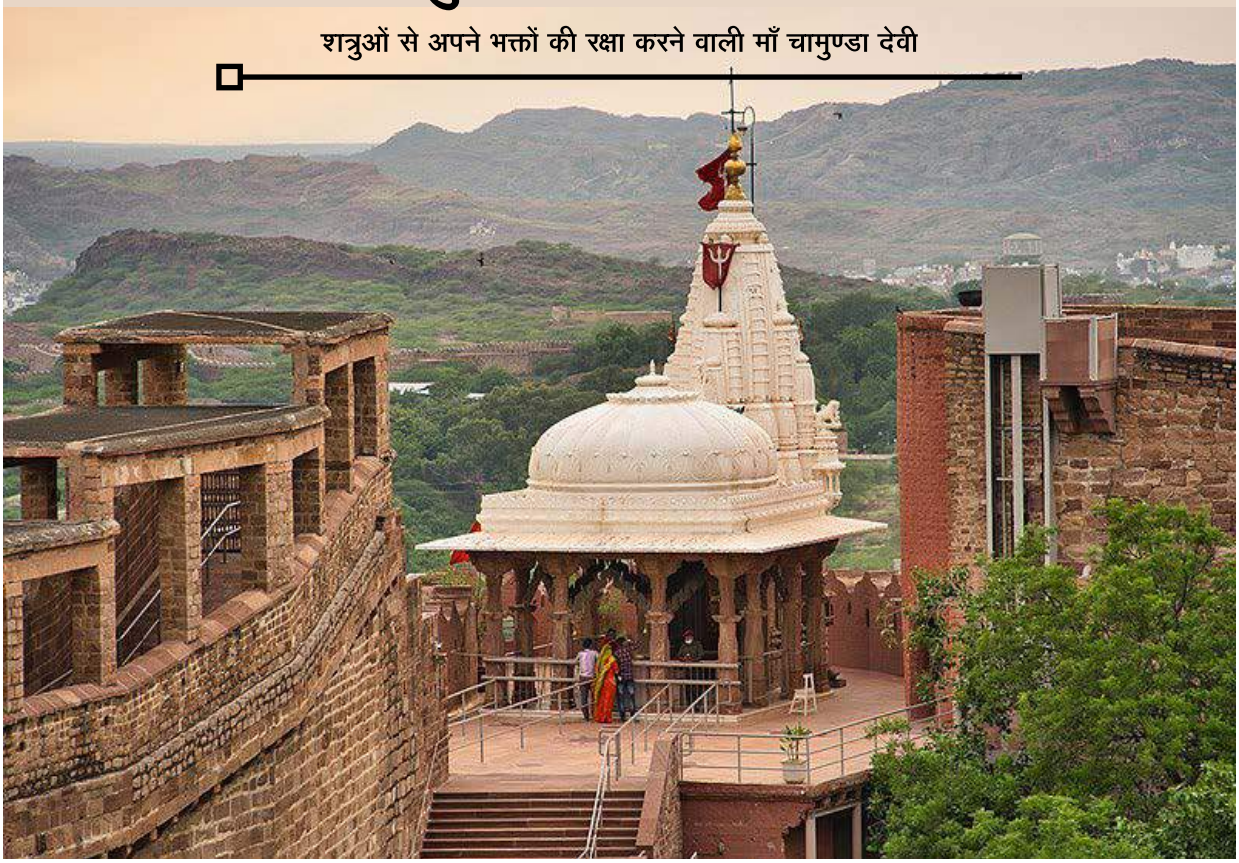

**आकांक्षा यादव**
पोस्टमास्टर जनरल आवास नदेसर,
कैण्ट प्रधान डाकघर, वाराणसी

राजस्थान अपने किलों, हवेलियों और मंदिरों के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ के राजपरिवारों में मातृ–शक्ति की महिमा अपरम्पार है। विभिन्न किलों में मातृ–शक्ति की पूजा के उदाहरण देखे जा सकते हैं। जोधपुर में मेहरानगढ़ स्थित चामुण्डा देवी का मंदिर काफी प्रसिद्ध है, जो किले के दक्षिणी भाग में सबसे ऊंची प्राचीर पर स्थित है। चामुंडा देवी का यह मंदिर जोधपुर राज परिवार का इष्ट देवी मंदिर तो है ही, पर लगभग सारा जोधपुर ही इस मंदिर की देवी को अपनी इष्ट अथवा कुल देवी मानता है।

मेहरानगढ़ किले की छत पर विराजमान यह मंदिर अपनी मूर्ति कला तथा उत्तम भवन निर्माण कला की एक अनूठी मिसाल है। यहाँ से सारे शहर का विहंगम दृश्य साफ नजर आता है। मेहरानगढ़ किले में प्रवेश मार्ग से सूर्य की आभा का आभास देते चामुंडा देवी मंदिर में प्रवेश करने का मार्ग आसपास बनी आकर्षक मूर्तियों से सुसज्जित है। मंदिर में स्थापित माँ भवानी की मूर्ति मगन बैठी मुद्रा की बजाय चलने की मुद्रा में नजर आती है। माँ चामुंडा देवी को अब से करीब 550 साल पहले मंडोर के परिहारों की कुल देवी के रूप में पूजा जाता था। इस मंदिर में देवी की मूर्ति 1460 ई. में चामुंडा देवी के एक परमभक्त मंडोर के तत्कालीन राजपूत शासक राव जोधा द्वारा अपनी नवनिर्मित राजधानी जोधपुर में बनाए गए किले में ही स्थापित की गई।

पहले माँ चामुंडा को जोधपुर और आस–पास के लोग ही मानते थे और इनकी पूजा अर्चना किया करते थे। लेकिन माँ चामुंडा में लोगों का विश्वास 1965 के युद्ध के बाद बढ़ता

चला गया। लोगों की आस्था बढ़ने के पीछे की वजह के बारे में कहा जाता है कि जब 1965 का युद्ध हुआ था, तब सबसे पहले जोधपुर को लक्ष्य बनाया गया था और माँ चामुंडा ने चील के रूप में प्रकट होकर जोधपुरवासियों की जान बचाई थी और किसी भी तरह का कोई नुकसान जोधपुर को नहीं होने दिया था। तब से जोधपुरवासियों में माँ चामुंडा के प्रति अटूट विश्वास है। शत्रुओं से अपने भक्तों की रक्षा करने वाली देवी का यह रौद्र रूप है जो सांसारिक शत्रुओं से उनकी रक्षा के साथ–साथ उनके भौतिक (शारीरिक) दुखों तथा मानसिक त्रासदियों को दूर करके उनमें आत्मविश्वास एवं वीरता का संचार कर जीवन को एक गति प्रदान करता है। नवरात्रों में तो देश के तमाम अंचलों से यहाँ भक्तों का आवागमन होता है। 30 सितम्बर 2008 को नवरात्रि के पहले दिन इस मंदिर–परिसर में भगदड़ मचने से काफी लोगों की मौत हुई थी और लोग घायल हुए थे। उस समय चामुण्डा देवी का यह मंदिर राष्ट्रीय–अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सुर्खियों में रहा था।

चामुण्डा देवी के प्रताप व वैभव का वर्णन श्री मत्स्य पुराण तथा श्री मार्कंडेय पुराण में भी मिलता है। महाभारत के वन पर्व तथा श्री विष्णु पुराण के धर्मोत्तर में भी आदिशक्ति की स्तुति की गई है। एक पौराणिक मान्यता के अनुसार देवासुर संग्राम में जब शिवा (मां शक्ति) ने राक्षस सेनापति चंड तथा मुंड नामक दो शक्तिशाली असुरों का वध कर दिया तो माँ दुर्गा द्वारा देवी के इस 'शत्रु नाशिनी' रूप को चामुंडा का नाम दिया गया। जैन धर्म में भी देवी माँ चामुंडा को मान्यता प्राप्त है तथा माँ देवी का यह रूप पूर्णतः सात्विक रूप में पूजा जाता है।

**अच्छे कर्म करने के बावजूद भी, लोग केवल आपकी बुराइयाँ ही याद रखेंगे, इसलिए लोग क्या कहते हैं इस पर ध्यान मत दो, तुम अपना कर्म करते रहो।**

ऐतिहासिक है जोधपुर में मेहरानगढ़ स्थित चामुण्डा देवी का मंदिर

# बड़ी उपलब्धियों व आशातीत सफलता के लिए देखें बड़े सपने

**सीताराम गुप्ता**
स्वतंत्र लेखन व विचारक
पीतम पुरा, दिल्ली

कुछ लोग जीवन में आने वाली समस्याओं से विशेष रूप से आर्थिक समस्याओं से घबराकर अपने खर्चों में कटौती करने और अपने सपनों का गला घोटने में लग जाते हैं। उनके अनुसार जीवन में समस्याओं से बचने का यही एकमात्र उपाय है लेकिन वास्तविकता इसके विपरीत होती है। समस्याओं से बचने से न तो हमारी समस्याएँ कम होती हैं और न उनका समाधान ही हो पाता है। ये तो बिल्ली को देखकर कबूतर के आँखें मूँद लेने जैसी स्थिति है। ऐसे लोग प्राय: कहते हैं कि हवाई किले मत बनाओ या दिन में सपने देखना छोड़ दो लेकिन आज ये बात सिद्ध हो चुकी है कि जीवन में आगे बढ़ने या कुछ पाने के लिए दिन में सपने देखना बहुत जरूरी है। हमारा भविष्य हमारे सपनों के अनुरूप ही आकार ग्रहण करता है। आज दुनिया में जो लोग भी सफलता के ऊँचे पायदानों पर पहुँचे हैं वे सब अपने बड़े सपनों की बदौलत ही ऐसा कर पाए हैं और जो लोग किसी भी क्षेत्र में सबसे नीचे के पायदान से भी नीचे हैं वे भी अपने कमजोर व विकृत सपनों के कारण ही वहाँ हैं।

''**रिच डैड पुअर डैड**'' के लेखक रॉबर्ट टी. कियोसाकी कहते हैं कि हमें अपने खर्चों में कमी करने की बजाय अपनी आमदनी बढ़ानी चाहिए और अपने सपनों को सीमित करने की बजाय अपने साहस और विश्वास में वृद्धि करनी चाहिए। जिस किसी ने भी सही सपने चुनने और देखने की कला विकसित की है वही संसार में सबसे ऊपर पहुँच सका है। ऊपर पहुँचने का अर्थ केवल धन–दौलत कमाने तक सीमित नहीं है अपितु जीवन के हर क्षेत्र में उन्नति व विकास से है। अच्छा स्वास्थ्य तथा प्रभावशाली व आकर्षक व्यक्तित्व पाने का सपना भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं होता। जो लोग जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में अपेक्षित ऊँचाइयों तक नहीं पहुँच पाते जरूर उनके सपनों व उन्हें देखने के तरीकों में कोई कमी रही होगी। सपना देखने के बाद उसकी देख–भाल व परवरिश करना भी अनिवार्य है ताकि वे अपने अंजाम तक पहुँच सके। प्रश्न उठता है कि सही सपनों का चुनाव कैसे करें और कैसे उन्हें देखें? इन्हीं उद्देश्यों

की पूर्ति के लिए पश्चिमी देशों में हर साल 11 मार्च को 'ड्रीम डे' अथवा 'स्वप्न दिवस' मनाया जाता है।

वास्तविकता ये है कि हमारा मन कभी चैन से नहीं बैठता। उसमें निरंतर विचार उत्पन्न होते रहते हैं। एक विचार जाता है तो दूसरा आ जाता है। हर घंटे सैकड़ों विचार आते हैं और नष्ट हो जाते हैं। ये विचार हमारी इच्छाओं के वशीभूत होकर ही उठते हैं। ये हमारे सपने ही होते हैं। सपनों का प्रारंभिक स्वरूप। हमारे अवचेतन व अचेतन मन में विचारों की कमी नहीं होती। पूरे जीवन के अच्छे व बुरे सभी अनुभव इनमें संग्रहित रहते हैं। ये अनुभव ही हमारे विचारों के मूल में होते हैं। इन असंख्य विचारों में से जो विचार जीवन या भौतिक जगत में वास्तविकता ग्रहण कर लेता है वो एक सपने की पूर्णता ही होती है। कई बार हमें अपने इस सपने की जानकारी भी नहीं होती। सपने की जानकारी न होने से सपने की जानकारी होना बेहतर ही नहीं बेहतरीन है। अपने सपनों की सही जानकारी न होने से यह संभावना भी बनी रहती है कि गलत विचार हमारा सपना बनकर हमें तबाह कर डाले। अतः नींद में नहीं अपितु खुली आँखों से सोच–समझकर सपने देखना ही श्रेयस्कर है।

अब एक और प्रश्न उठता है कि सही विचारों अथवा सपनों के चयन के लिए क्या किया जाए? सही विचारों के चयन के लिए विचारों को देखकर उनका विश्लेषण करना और उनमें से किसी अच्छे उपयोगी विचार का चयन करना अपेक्षित है। जब हम रोज मर्रा की सामान्य अवस्था में होते हैं तो न तो विचारों को सही–सही देखना ही संभव है और न उनका विश्लेषण करना ही। इसके लिए मस्तिष्क की शांत–स्थिर अवस्था अपेक्षित है। ध्यान द्वारा यह स्थिति प्राप्त की जा सकती है। मस्तिष्क की चंचलता कम हो जाने पर जब हम शांत–स्थिरि हो जाते हैं तो उस अवस्था में विचारों को देखना और उनका विश्लेषण करना संभव हो जाता है। उस समय हमें चाहिए कि हम अनुपयोगी नकारात्मक विचारों पर ध्यान न देकर केवल उपयोगी सकारात्मक उदात्त विचारों पर संपूर्ण ध्यान केंद्रित कर लें। हम जो चाहते हैं मन ही मन उसे दोहराएँ। उसी विचार के भाव को पूर्ण एकाग्रता के साथ मन में लाएँ। उस भाव को अपनी कल्पना में चित्र के रूप में देखें।

अपने विचार, भाव या सपने को चित्र के रूप में देखना सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण व फलदायी होता है। हम पूरे घटनाक्रम को एक फिल्म अथवा उस सपने की परिणति को एक चित्र की तरह देखें। हमारी फिल्म अथवा चित्र जितना अधिक स्पष्ट होगा सपने की सफलता उतनी ही अधिक निश्चित हो जाएगी। यह पूरी प्रक्रिया हमारे मस्तिष्क को अत्यंत सक्रिय व उद्वेलित कर देती है। मस्तिष्क की कोशिकाएँ हमारे सपने के अनुरूप अपेक्षित परिस्थितियों का निर्माण करने में जुट जाती हैं और तब तक न स्वयं चैन से बैठती हैं और न हमें ही चैन से बैठने देती हैं जब तक कि वो सपना पूरा नहीं हो जाता। बिना किसी सपने के न तो हमारा मस्तिष्क ही सक्रिय होता है और न अपेक्षित परिस्थितियों का निर्माण ही होता है। इसी से जीवन में सपनों का बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। अपने अंदर सही सपने देखने की कला उत्पन्न कीजिए। अच्छे सपने देखो और जीवन में विश्व के सर्वोच्च शिखर पर कदम रख दो।

# भव सागर पार हमें कर दें

**डॉ. विष्णुप्रसाद पाठक**
लखनऊ, उत्तर प्रदेश

सुख धाम ललाम सियावर के,
पद पंकज में मम रति भर दें।
हे वीणापाणि दया करके,
मन रामभक्ति भावित कर दें।।
जनमन को अनुरंजित करके,
अब तनमन को निर्मल कर दें।
हे भारति कृपा दृष्टि करके,
भवभंजन राम में मति कर दें।।
गुंजित मधुमय मधुमास करें,
मां वीणा को मुखरित कर दें।
उर अंतर व्यथा दुरित करके,
जनजन में भक्ति भाव भर दें।।
प्रभु राम नाम का जाप करें,
सियाराम रसायन रस भर दें,
जिह्वा प्रभुरस रसलीन रहे ,
मन मानस आह्लादित कर दें।।
जन मानस में रसधार बहे ,
अनुगुंजन गीतों का कर दें।
प्रभु चरणों में अनुराग रहे,
भव सागर पार हमें कर दें।।

23 अप्रैल पर विशेष

# श्री हनुमान प्रकट्योत्सव पर सुंदरकांड विशेष

**सोनल मंजू श्री ओमर**
राजकोट, गुजरात

हिंदू पंचांग के अनुसार, हनुमान प्रकट्योत्सव हर वर्ष चौत्र माह के शुक्ल पक्ष की पूर्णिमा तिथि को मनाई जाती है। इस वर्ष यह तिथि 23 अप्रैल को मनाई जाएगी। इस बार हनुमान प्रकट्योत्सव मंगलवार को पड़ने से यह और भी खास हो जाता है क्योंकि माना जाता कि हनुमान जी का अवतार दिवस मंगलवार ही था। इसीलिए मंगलवार को हनुमान जी का दिन माना जाता है। इस तिथि के अलावा कई जगहों पर यह पर्व कार्तिक माह के कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी तिथि को भी मनाई जाती है। मान्यतानुसार, हनुमानजी को भगवान शिव का अंशावतार माना जाता है। जिस प्रकार राम जी को भगवान विष्णु का अंशावतार माना जाता है। राम जी का अवतरण चौत्र शुक्ल पक्ष नवमी को और हनुमान जी का अवतरण एक सप्ताह बाद चौत्र शुक्ल पक्ष की पूर्णिमा को पिता केसरी व माता अंजनी के घर हुआ था। शास्त्रों के अनुसार, आज भी पृथ्वी पर हनुमान जी वास करते हैं। यह कहा जाता है कि हनुमान जी को चिरंजीवी का आशीर्वाद प्राप्त है। इसी कारण उनके अवतरण दिवस को हनुमान जयंती न कहकर हनुमान प्रकट्योत्सव कहा जाता है।

हनुमान प्रकट्योत्सव पर लोग सुख–समृद्धि की प्राप्ति के लिए पूजा–अर्चना के साथ ही हनुमान चालीसा व रामायण के सुंदरकांड का पाठ करते है। माना जाता हैं कि सुंदरकाण्ड के पाठ से हनुमानजी प्रशन्न होते हैं। सुंदरकाण्ड के पाठ से बजरंगबली की कृपा बहुत ही जल्द प्राप्त हो जाती है।

वास्तव में श्रीरामचरितमानस के सुंदरकाण्ड की कथा सबसे अलग है। हनुमानजी, सीताजी की खोज में लंका गए थे और लंका त्रिकुटांचल पर्वत पर बसी हुई थी। त्रिकुटांचल पर्वत यानी यहां 3 पर्वत थे। पहला सुबैल पर्वत, जहां के मैदान में युद्ध हुआ था।

दूसरा नील पर्वत, जहां राक्षसों के महल बसे हुए थे। तीसरे पर्वत का नाम है सुंदर पर्वत, जहां अशोक वाटिका निर्मित थी। इसी वाटिका में हनुमानजी और सीताजी की भेंट हुई थी। इस काण्ड की सबसे प्रमुख घटना यहीं हुई थी, इसलिए इसका नाम सुंदरकाण्ड रखा गया। संपूर्ण श्रीरामचरितमानस भगवान श्रीराम के गुणों और उनके पुरूषार्थ को दर्शाती है, सुंदरकाण्ड एक मात्र ऐसा अध्याय है जो श्रीराम के भक्त हनुमान की विजय का काण्ड है।

मनोवैज्ञानिक नजरिए से देखा जाए तो यह आत्मविश्वास और इच्छाशक्ति बढ़ाने वाला काण्ड है, सुंदरकाण्ड के पाठ से व्यक्ति को मानसिक शक्ति प्राप्त होती है, किसी भी कार्य को पूर्ण करने के लिए आत्मविश्वास मिलता है। राम चरित मानस के रचयिता गोस्वामी तुलसीदास जी के अनुसार हर तरह की समस्या से निजात पाने के लिए सुंदरकांड के पाठ से बेहतर कोई उपाय नहीं है। शास्त्रों के अनुसार जीवन में आने वाला हर बड़े से बड़ा संकट हनुमान जन्मोत्सव पर सुंदरकांड का पाठ करने से टाला जा सकता है। कहा जाता है इस शक्तिशाली पाठ के आगे हर संकट अपने घुटने टेक देता है।

**एक उपहार तब पवित्र होता है जब वह दिल से सही व्यक्ति को सही समय पर और सही जगह पर दिया जाता है, और जब हम बदले में कुछ भी उम्मीद नहीं करते हैं**

# शिव पार्वती का विवाह

**चेतना साबला**
अंधेरी, मुंबई

पार्वती की तपस्या ने पाया फल,
विवाह में शिव के संग सजी सुहल।

लेकर संग नगाड़े ढोल,
धरती पर आया वह आदि-अंत का अनंत अमोल।

आस-पास रही है चाँदनी चमक,
फूलो की हो रही बहार,
विवाह के रस्मों में गूंज उठा संसार,
अमरपुरी में हुआ विश्व उद्धार।

हिमालय की कन्या पार्वती बनी,
कैलाश पर्वत को उन्होंने पाया धनी।

शिव पार्वती का यह विवाह,
बना सुख-समृद्धि का आधार।

शिव और पार्वती का यह प्रेम अतुल,
सिखाये करे कैसे जीवन का व्यापन मिलजुल।

जो होते हैं भगवान की भक्ति में लीन,
उसके जीवन में होता है सुख भरा हर दिन।

# कर्मगत श्रेष्ठता द्वारा आंतरिक गौरवपूर्णता का स्थायी निर्माण

**डॉ. अजय शुक्ला**
गोल्ड मेडलिस्ट इंटरनेशनल ह्यूमन राइट्स मिलेनियम अवार्ड
डायरेक्टर, स्प्रीचुअल रिसर्च
स्टडी एंड एजुकेशनल ट्रेनिंग सेंटर
देवास, मध्य प्रदेश

"मानवीय भावनाओं की उत्पत्ति मनुष्य के मनन – चिंतन के पश्चात् वाणी के माध्यम से और सम्पूर्ण रूप से तो व्यवहारगत स्थिति अर्थात् संपन्न किए जाने वाले कर्म से दृष्टिगोचर होती है जिसमें विभिन्न व्यवहार के अंतर्गत अच्छे या बुरे कर्मों का समावेश रहता है जिसके कारण समाज में मानव की पहचान होती है और वह सम्मान या अपमान का सहभागी बनता है। श्रेष्ठ कर्म के करने पर आंतरिक एवं बाह्य रूप से गौरवपूर्ण तथा इसके विपरीत कर्म के निदृष्टता में परिणित हो जाने पर स्वयं तथा सर्व द्वारा निंदा, अवहेलना तथा घृणा का पात्र बन जाता है और तब व्यक्ति द्वारा दुःखद स्थिति की अनुभूति की जाती है जिसके लिए वही एकमात्र उत्तरदायी होता है। मानवीय स्वभाव की नियति में यह मान लेना कि वह गलती या बुराई करेगा ही उचित मूल्यांकन नहीं कहा जा सकता तथा मानव से श्रेष्ठ कार्य ही सदा होते रहेंगें यह भी एक असामान्य दृष्टिकोंण का परिणाम है जो कि जीवन में घटित होने वाली घटनाओं एवं परिणाम से कोई संबंध नहीं दर्शाता है। मानव के जीवन में 'घटित एवं घट' रही घटनाओं के प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष प्रभाव का आंकलन यदि व्यक्ति स्वयं तथा उसके संपर्क – संबंध में आने वाले व्यक्ति कर लें तो एक सीमा तक संतुलित जीवन के निर्माण में बड़ी सहायता मिल सकती है। "

**अगवानी का दिव्यतायुक्त पवित्र परिवेश :** सामान्यतः अपने से बड़ों, आदरणीय एवं श्रद्धेय महापुरुषों के आगमन के समय हम तथा उनसे जुड़े लोग, चाहे उनके विचारों में अपनी सहमति रखते हों अथवा नहीं आतिथ्य सत्कार हेतु प्रयासरत रहते हैं अब आगंतुक के प्रति अर्थात् उनमें उनका विरोधाभासी दृष्टिकोंण ही क्यों न हो, अत्यंत समीप से लेकर उन्हें बिल्कुल न जानने वाले लोगों तक श्रद्धा, स्नेह एवं सामाजिक दबाव के वशीभूत होकर उन्हें लेने अर्थात् उनकी अगवानी के लिए जाते हैं और आनंद के स्वरों की मध्यम व तीव्र ध्वनि के द्वारा पुष्पहारों से उनका आदर – सत्कार एवं स्वागत किया जाता है और जुलूस के रूप में सम्मानित व्यक्तित्व को यथोचित एवं पूर्व निश्चित स्थान पर ले जाया जाता है।

**गंतव्य स्थल तक पहुँचते –** पहुँचते स्वागत के सम्पूर्णता का परिवेश न्यूनता में परिवर्तित हो जाता है और अतिथि महोदय को अगले कार्यक्रम की सूचना से अवगत कराने के लिए अनेक बार स्वयं आवाज देना पड़ता है कि कोई आए और उनकी सहायता करे क्योंकि प्रशंसकों एवं आलोचकों तथा दबाव स्वरुप एकत्रित जनसमुदाय अपने– अपने कार्यों में व्यस्त हो चुके होंगे और तथाकथित महिमामंडन का छोटा – सा दल उस परिवेश में अपने स्वार्थ सिद्धि के मनोकामना की चादर ओढ़े आँख मिचोली कर रहे होंगे।

इस प्रकार अगवानी का दिव्य दर्शन करने की अभिलाषा यदि हमारे हृदय में हो तो हमें देव आत्माओं की ओर उन्मुख होना पड़ेगा, जब श्री रामचन्द्र जी वनवास के पश्चात् अयोध्या वापस आए तो यह खबर बिजली की भांति सम्पूर्ण नगर में फैल गई और समस्त परिवेश व्यक्ति से लेकर प्रकृति तक सतोप्रधान भावों के पुष्प लिए अपनी छलकती हुईखुशी के साथ उनकी आगवानी के लिए चल पड़े और सबने अपने ईष्ट के दर्शन किए तथा इतना धन्य हुए कि 'अगवानी' का परिवेश दीपावली के रूप में चतुर्दिक प्रकाशित हो उठा।

**अग्रिम संकल्पित सिद्धि की व्यवहारिकता :** कार्य के अपेक्षित परिणाम की सिद्धि हेतु मानव द्वारा अनेक प्रयास विभिन्न परिस्थितियों के अंतर्गत संपन्न किए जाते हैं और हमें अपनी स्थूल एवं सूक्ष्म तैयारी के फलस्वरुप सफलता की प्राप्ति होती है, यह बात पूर्णतः सत्य है कि कार्य या लक्ष्य भेदन हेतु विधिवत योजनाओं की आवश्यकता होती है और इन योजनाओं का ठोस आधार मानव की कार्य या साध्य के प्रति अग्रिम मानसिक तैयारी है, अंतःकरण द्वारा सृजित भाव इस बात के लिए एक विशेष प्रकार की अभिप्रेरणा प्रदान करता है ।

हमें कार्य की सिद्धि हेतु परिश्रम अर्थात् आवश्यक साधन जुटाते हुए साध्य की ओर अग्रसर होना ही है, अब चाहे किसी भी प्रकार का परिस्थितिजन्य गतिरोध मार्ग में बाधक बनकर हमारे समक्ष उपस्थिति दर्ज करे तब भी हम रुकने वाले नहीं हैं और न ही समझौता कर दिशा से भ्रमित होने वाले हैं क्योंकि इन समस्त प्रकार की परिस्थितियों की विकरालता से हम पूर्व में ही सूक्ष्म मुकाबला कर चुके हैं जिन्हें हमने अपने संकल्पों की दृढ़ता से पराजित भी कर दिया है हम समय की पिछली पंक्ति में खड़े या पीछे – पीछे चलने के लिए बाध्य नहीं हैं ।

बल्कि समय हमारे महान कर्मों के पीछे सुरक्षा उपागम के रूप में हमारी सहायता करेगा न कि हम या हमारे संकल्प पश्चाताप के साथ समय के निकल जाने का संताप झेलेंगें, अब प्रश्न उठता है कि क्या मानव श्रेष्ठ कर्मों की संपादन क्रिया में अपने स्वार्थों की झोली तो नहीं फैलाएगा, क्षणिक सुख की लालसा कहीं उसे अपनी ओर आकर्षित तो नहीं करेगीं तथा सांसारिक चकाचौंध उसे पथ से विचलित तो नहीं करेगीं, यदि नहीं तो मानव की 'अग्रिम' संकल्पित सिद्धि अवश्य साकार होगी।

**अचल स्थिति से संबंधित जीवन शैली :** संकल्प में भी विचलन को मस्तिष्क में स्थान न देने हेतु कटिबद्ध मानव अत्यंत कड़वी सच्चाई युक्त कर्म – फल को सामान्यतः जीवन में स्वीकार कर लेता है परन्तु प्रतिदिन की घटनाओं में जब किसी व्यक्ति या नजदीकी व्यक्तियों द्वारा कोई व्यंग्यात्मक बात कही अथवा किसी कड़वे सत्य पर ध्यान आकर्षित कराया जाता है तो मानव पर इस प्रकार की क्रिया का पूर्णतः विपरीत प्रभाव पड़ता है और ऐसी स्थिति में वह आंतरिक रूप से व्यग्रता पूर्ण आवेश को शांति के आवरण से ढंकने का प्रयास करता है।

**इस बात के आगमन कि –** ' मेरे कहने का नकारात्मक अर्थ या बुरा मत मानना' तक वह अपनी अवस्था पर नियंत्रण करता है और सामने वाले व्यक्ति से बदले का भाव समय आने पर बदला लेने के लिए अंतर्मन में संकल्प करता हुआ वह या तो परिचर्चा में परिवर्तन का प्रयास करता है या वहां से कहीं और चले जाने में सार समझता है यहां प्रश्न यह नहीं है कि मनुष्य क्यों विचलित हो जाता है बल्कि वास्तविक प्रश्न यह है कि उसे वृहद् झंझावात नहीं हिला पाते तथा वह अचल होकर उस विपरीत परिस्थिति का सामना कर लेता है।

**किन्तु यदा :** कदा साधारण सा परिवेश उसकी स्थिति को पूर्णतः डगमग क्यों कर देता है? क्या वह यह भूल जाता है कि मुझ आत्मा ने कितने विरोधाभासी वातावरण को पार कर जीवन में सफलता प्राप्त की है तो समस्त प्रश्नों का प्रतिउत्तर मिलेगा कि – मानव की सोच विकृत परिस्थितियों के प्रति पूर्णतया विमुख हो गई है जिसके परिणाम स्वरुप उसने समस्त अवधारणाओं का नकारात्मक स्वरुप स्वयं में समाहित करना समाप्त कर दिया है और इन अग्राहय असामाजिक अवधारणाओं को जीवन – शैली से हटाकर ही वह किसी भी परिस्थिति में 'अचल' रह सकता है।

**अचूक यंत्र द्वारा विश्वास मंत्र का उपयोग :** मानव द्वारा स्वयं में सक्षम साधन जिसे विशिष्ट शब्दावली के साथ एक अनुपम कृति – 'आत्म शक्ति' के रूप में आदरपूर्वक स्वीकार किया गया है और इसमें अपनी सम्पूर्ण आस्था विधिवत् रूप से साधना करते हुए व्यक्त की जाती है जिससे कि जीवन का विकास युक्त अस्तित्व सदा गतिशील बना रहे एवं निरन्तर वृद्धि की प्राप्ति में संलग्नता मानव को कर्म में व्यस्त रखती है अब इसका निर्धारण तो हमें स्वयं करना है कि हमारी आत्मा की आवाज जिसे पूर्ण परिष्कृत ध्वनि की संज्ञा से भी निरुपित किया जा सकता है।

अंततः आत्म ध्वनि किस दिशा में उन्मुख होने के लिए हमारी शक्तियों एवं गुणों को प्रेरित कर रही है जिससे हमारी स्थायी सुख – शांति भी बनी रहे और आनंददायी स्थिति में व्यवधान रूपी अतिक्रमण भी न हो सके इस प्रकार की आदर्श जीवन – शैली की उपलब्धता का अर्थ है कि हमारे कर्मो की कुशलता तथा इन कर्मो की क्रियमाणता में उपयोग किए जाने वाले साधनों की अक्षुण्य पवित्रता जो श्रेष्ठ परिणाम की प्राप्ति में सदा सहायक सिद्ध होती है ।

दृढ़ निश्चयी विचारकों का यह मानना है कि संसार में कोई कार्य असंभव नहीं है परन्तु कार्य को हर परिस्थिति में संभव बनाने के लिए तीव्र इच्छा शक्ति की आवश्यकता होती है जो कि मनुष्य के हृदय में सदा लक्ष्य के प्रति स्मृति की ज्योति जलाए रखने में सहयोग प्रदान करती है तथा मानव को अभिप्रेरणा युक्त सकारात्मक विचारों के स्थायित्व में अखंड रहने के लिए बाध्य भी करती रहती है और यही स्थिति कर्त्तव्य पथ पर डटे रहने तथा किसी भी परिस्थिति में स्वयं को घबराने से सुरक्षित रखती है अतः मानव द्वारा 'विश्वास – रूपी – मंत्र' का उपयोग लक्ष्य भेदन में सदा 'अचूक' यंत्र की भांति उपयोगी रहता है।

**अच्छाई की जीवंतता का परणिति स्वरूप :** मानवीय भावनाओं की उत्पत्ति मनुष्य के मनन– चिंतन के पश्चात् वाणी के माध्यम से और सम्पूर्ण रूप से तो व्यवहारगत स्थिति अर्थात् संपन्न किए जाने वाले कर्म से दृष्टिगोचर होती है जिसमें विभिन्न व्यवहार के अंतर्गत अच्छे या बुरे कर्मो का समावेश रहता है जिसके कारण समाज में मानव की पहचान होती है और वह सम्मान या अपमान का सहभागी बनता है, श्रेष्ठ कर्म के करने पर आंतरिक एवं बाह्य रूप से गौरवपूर्ण तथा इसके विपरीत कर्म की निकृष्टता में परिणित हो जाने पर स्वयं तथा सर्व द्वारा निंदा, अवहेलना तथा घृणा का पात्र बन जाता है ।

और तब व्यक्ति द्वारा दुःखद स्थिति की अनुभूति की जाती है जिसके लिए वही एकमात्र उत्तरदायी होता है, मानवीय स्वभाव की नियति में यह मान लेना कि वह गलती या बुराई करेगा ही उचित मूल्यांकन नहीं कहा जा सकता तथा मानव से श्रेष्ठ कार्य ही सदा होते रहेंगें यह भी एक असामान्य दृष्टिकोण का परिणाम है जो कि जीवन में घटित होने वाली घटनाओं एवं परिणाम से कोई संबंध नहीं दर्शाता है, मानव के जीवन में 'घटित एवं घट' रहीं घटनाओं के प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष प्रभाव का आंकलन यदि व्यक्ति स्वयं तथा उसके संपर्क – संबंध में आने वाले व्यक्ति कर लें तो एक सीमा तक संतुलित जीवन के निर्माण में बड़ी सहायता मिल सकती है।

अर्थात् व्यक्ति द्वारा किया जाने वाला आचरण इस प्रकार का नहीं होगा कि उसके समक्ष आने वाली आत्माओं को यह आभास होने लगे कि इस व्यक्ति द्वारा अपनी सफलता या असफलता से प्राप्त स्थिति को थोपा या विभिन्न रूप में लादने का प्रयास किया जा रहा है, इतनी गहराई से मानव जीवन का मूल्य – समझ, सत्य की प्रियता एवं अप्रियता का अंतर्मन में आंकलन करके ही अभिव्यक्त करना चाहिए क्योंकि यहीं से ' अच्छाई ' जीवंत स्वरुप में परिणित होती है ।

मासिक
# अध्यात्म संदेश
जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन की मासिक ई–पत्रिका

**क्या आपकी लेखन में अभिरुचि है?**

क्या आप भी कभी अपने विचारों, भावनाओं को व्यक्त करने के लिए कागज – कलम उठाते हैं?

क्या आप लेखक/लेखिका, कवि/कवियत्री है?

आपको **अध्यात्म संदेश** ई पत्रिका की ओर से आमंत्रण है, आप अपनी रचनाएं, कविताएं, गीत, लघु कथाएं हमें प्रेषित करें। आपकी रचनांए आलेख प्रकाशन योग्य होने पर उसका पत्रिका में अवश्य प्रकाशन किया जाएगा।

अपनी रचनायें हमें प्रेषित करते समय यह अवश्य सुनिश्चित करें कि यह रचना आपकी अपनी मौलिक कृति है और न तो यह किसी पत्र – पत्रिका – पुस्तक – ब्लॉग – वेबसाइट आदि में प्रकाशनार्थ विचाराधीन है और न ही कभी प्रकाशित हुई है।

आपकी रचना को मूल रूप में प्रकाशित/संपादित रूप में प्रकाशित करने अथवा प्रकाशित न करने का पूर्ण विवेकाधिकार संपादक मंडल का है।

**आलेख भेजने की अंतिम तिथि 15 अप्रैल 2024**

**विशेष : शब्द सीमा 500–750 शब्दों के मध्य होनी चाहिए**

1. लेखक/लेखिका अपनी रचना यूनिकोड/कृतिदेव – वर्ड फाइल में टाइप कराकर ही भेंजे। पी. डी. एफ फाइल न भेजें।
2. लेखक/लेखिका अपनी स्वरचित अप्रकाशित एवं मौलिक रचना के साथ कृपया अपना संक्षिप्त परिचय, व्हाट्सप नंबर, फोटो के साथ भेजें ।
3. आपकी स्वीकृत रचना आपके फोटो के साथ प्रकाशित की जायेगी। प्रकाशित रचना पर पारिश्रमिक देय नहीं है।
4. जनकल्याण हित में ज्ञान वर्धन हेतु यह ई पत्रिका पूर्णतः निः शुल्क है। अपनी रचनाएँ ई–मेलः **editor.adhyatmsandesh@gmail.com** पर प्रेषित करें।

– योगी शिवनन्दन नाथ
प्रधान संपादक

# महाकाली के पावन स्थल: केरल के कोडुंगल्लूर भगवती

**डॉ. षैजू के**
सहायक आचार्य
सरकारी लॉ कॉलेज एर्णाकुलम
केरल

कोडुंगल्लूर भगवती मंदिर के नाम से भी प्रसिद्ध इस मंदिर का इतिहास अत्यंत प्राचीन है और भगवान विष्णु के छठवें अवतार परशुराम से जुड़ा हुआ है। पौराणिक मान्यताओं के अनुसार दारुका नामक दैत्य से केरल क्षेत्र और यहाँ रहने वाले लोगों की रक्षा करने के लिए परशुराम ने भगवान शिव से प्रार्थना की। तब महादेव के आदेश के अनुसार परशुराम ने इस तीर्थ स्थान का निर्माण कराया और देवी भद्रकाली की पूजा की। इसके बाद देवी ने दारुका दैत्य का नाश किया।

10 एकड़ भूमि क्षेत्र के मध्य में बने कोडुंगल्लूर भगवती मंदिर का निर्माण केरल वास्तुशैली में हुआ है। मंदिर परिसर चारों ओर से पीपल और बरगद के वृक्षों से घिरा हुआ है। मंदिर के गर्भगृह में सप्तमातृकाएँ विराजमान हैं। इन सभी की प्रतिमाएँ उत्तरमुखी हैं। इसके अलावा मंदिर में भगवान गणेश और वीरभद्र भी स्थापित हैं। देवी भद्रकाली की आठ भुजाओं वाली प्रतिमा भी उत्तरमुखी है। इस प्रतिमा का निर्माण कटहल की लकड़ी से हुआ है। देवी की आठ भुजाएँ शस्त्रों और सनातन प्रतीक चिन्हों से सुसज्जित हैं।

**इतिहास :** कोडुंगल्लूर देवी मंदिर का इतिहास चेर काल से जुड़ा है। ऐसा कहा जाता है कि प्रसिद्ध चेरा राजा ने इलांगो आदिगल की तमिल क्लासिक सिलप्पथिकारम की नायिका कन्नकी के लिए मंदिर बनवाया था। उनके पति को शाही गहनों की चोरी में झूठा फंसाया गया और फिर शाही रक्षकों द्वारा मार डाला गया। वह भद्रकाली की भक्त थीं, और कोडुंगल्लूर में उनसे प्रार्थना करते समय, उन्हें मोक्ष प्राप्त हुआ और देवी की मूर्ति में विलीन हो गई। कन्नकी को काली दुर्गा का स्वरूप भी माना जाता है।

**मंदिर के त्यौहार :** श्री कुरुम्बा भगवती मंदिर अपने त्यौहार के लिए ही जाना जाता है। दरअसल यहाँ मनाया जाने वाला 'भरणि' उत्सव कई मायनों में विशेष है। ऐसा इसलिए क्योंकि इस त्यौहार के दौरान भक्त, देवी भद्रकाली को अपना ही रक्त समर्पित करते हैं। इसके अलावा इस त्यौहार में देवी भद्रकाली के लिए अपशब्दों से भरे गीत गाए जाते हैं। कोडुंगल्लूर भरणि उत्सव हर साल मार्च–अप्रैल (मीनम नाम के मलयालम मास) के दौरान मनाया जाता है। इस त्यौहार का पहला दिन 'कोझिकल्लू मूडल' के नाम से जाना जाता है। इस दौरान 'वेलिचप्पड' कहे जाने वाले देवी भद्रकाली के विशेष भक्त देवी को अपना रक्त समर्पित करते हैं। इन्हें देवी का प्रतिनिधि भी माना जाता है। 'अस्वति कवु तीनडल' त्यौहार का दूसरा दिन है। इस दिन राजशाही परिवार के सदस्य देवी भद्रकाली की पूजा करते हैं। मंदिर के अनोखे उत्सव के दौरान वेलिचप्पड मंदिर के आसपास तलवार हाथ में लेकर दौड़ते हैं और इस दौरान मंदिर की छत को भी लाठी–डंडों से पीटा जाता है। इसके अलावा देवी भद्रकाली के लिए अपशब्दों और गालियों से भरे गीत गाए जाते हैं। कहा जाता है कि इन अपशब्दों को सुनकर देवी भद्रकाली प्रसन्न होती हैं।

**दंतकथा :** कोडुंगल्लूर भगवती मंदिर से जुड़ी कई किंवदंतियाँ हैं। किंवदंतियों में से एक यह है कि भगवान विष्णु के अवतार, परशुराम ने अपने लोगों को अधिक समृद्ध बनाने के लिए मंदिर की पहली संरचना का निर्माण किया था। दारुका नामक राक्षस ने भगवान परशुराम को परेशान किया और उन्होंने भगवान शिव से प्रार्थना की जिन्होंने उन्हें इस मंदिर का निर्माण करने की सलाह दी। परशुराम ने शिव के देवता के साथ शक्ति देवी के रूप में भगवती की मूर्ति स्थापित की। भगवती ने उग्र भद्रकाली के रूप में राक्षस दारुका को मार डाला और परशुराम और उनके लोगों को बचाया।

दूसरी किंवदंती में उल्लेख है कि परशुराम को वर्तमान मंदिर से लगभग 1 किमी दक्षिण में भगवती के दर्शन हुए थे और उन्होंने उन्हें शराब और चिकन चढ़ाकर दुर्गा के रूप में पूजा की थी। फिर उन्होंने वहां मिली कुरुम्बा अम्मा की मूर्ति को वर्तमान मंदिर स्थल पर स्थानांतरित कर दिया।

कोडुंगल्लूर के लोगों द्वारा मानी जाने वाली एक किंवदंती यह है कि प्राचीन मंदिर कभी शिव का मंदिर था और ऋषि परशुराम ने शिव के साथ भद्रकाली की एक मूर्ति स्थापित की थी। मंदिर के स्वामी भगवान शिव हैं।

**कैसे पहुँचें? :** त्रिशूर पहुँचने के लिए नजदीकी हवाईअड्डा कोचीन इंटरनेशनल एयरपोर्ट है, जो यहाँ से लगभग 50 किलोमीटर (किमी) की दूरी पर है। त्रिशूर रेलवे स्टेशन दक्षिण भारत का एक महत्वपूर्ण रेलवे स्टेशन है। त्रिशूर रेलवे स्टेशन से मंदिर की दूरी लगभग 34 किमी है। इसके अलावा केरल के लगभग सभी प्रमुख शहरों से सड़क मार्ग से त्रिशूर पहुँचना आसान है। राष्ट्रीय राजमार्ग 47 त्रिशूर के पास से ही होकर गुजरता है।

**भौतिक संरचना :** यह मंदिर लगभग 10 एकड़ भूमि के बीच में है जो कभी बरगद और पीपल के पेड़ों से घिरा हुआ था। विशिष्ट केरल शैली की वास्तुकला में निर्मित, मंदिर में बहुत सारे गुप्त रास्ते और कक्ष हैं। काली प्रतिमा के पूर्व में बिना दरवाजे और खिड़कियों वाला एक गुप्त भूमिगत कमरा मंदिर का 'शक्ति केंद्र' (शक्ति का केंद्र) है। ग्रेनाइट कक्ष में केवल गर्भगृह के अंदर से दरवाजे के माध्यम से प्रवेश किया जा सकता है जिसे आज तक कभी नहीं खोला गया है।

**प्रतिष्ठा (इष्टदेव) :** मंदिर की इष्टदेव भगवती या काली हैं। यह मूर्ति कटहल के पेड़ से बनाई गई है और छह फीट ऊंची है। मूर्ति की आठ भुजाएँ हैं और प्रत्येक हाथ में तलवार, भाला, चक्र, मूसल, धनुष आदि जैसे हथियार और प्रतीक हैं और बालों से दारिकासुर का कटा हुआ सिर उत्तर की ओर है। सिर को एक मुकुट से सजाया गया है जो कथकली अभिनेता के सिर के टुकड़े जैसा दिखता है। शरीर पूरी तरह से सोने की चक्रों, हार आदि से बुनी जंजीरों से बनी सुनहरी पोशाक से ढका हुआ है। देवी को बुराईयों के विनाशक के रूप में उनके उग्र रूप में दिखाया गया है। गर्भगृह की पश्चिमी दीवार पर लटका हुआ एक कपड़ा देवता के प्रतीक के रूप में कार्य करता है, और भक्तों द्वारा इसकी पूजा की जाती है।

**उपदेवता (उपदेवता) :** सिलप्पथिकारम की नायिका कन्नकी का मंदिर के अंदर एक अलग मंदिर है। पल्लीमाडा शेत्रम

में देवी के पल्लीवल (तलवार) और चिलंका (पैर का आभूषण) की पूजा की जाती है। भगवान गणेश, क्षेत्रपाल, महामेरु, आदिशंकर, वासुरीमाला, भगवान वीरभद्र और सप्तमातृकाएं (सात माताएं) कोडुंगल्लूर भगवती मंदिर के अन्य देवता हैं। ऐसा कहा जाता है कि भगवान परशुराम ने स्वयं महामेरु, आदिशंकर की मूर्ति की स्थापना की थी, जिसका मुख पूर्व की ओर है और नंदी (शिव का बैल वाहन) की अनुपस्थिति दुनिया के किसी भी हिस्से में किसी भी अन्य शिव मंदिर में नहीं देखी जा सकती है।

कोडुंगल्लूर देवी मंदिर के आंतरिक मंदिर के पश्चिमी कक्ष में उत्तर की ओर मुख करके बैठी हुई मुद्रा में सप्तमातृकाओं की मूर्तियाँ हैं। पत्थर से बनी बारह फीट ऊँची क्षेत्रपाल मूर्तियाँ, जो देवी मंदिर में दुर्लभ हैं, बाहर प्रांगण में खड़ी हैं। देवी मंदिर में चेचक, वासुरीमाला जैसी बीमारियों को दूर करने वाली देवी स्थापित हैं। गणपति और वीरभद्र की दो दिशाओं की ओर मुख वाली मूर्तियाँ एक ही कक्ष में हैं। कोझिक्कल्लु पत्थर जहां भगवती को मुर्गे चढ़ाए जाते थे, पूर्वी और उत्तरी द्वार पर हैं।

**समारोह :** मंदिर में दो बहुत महत्वपूर्ण त्यौहार मनाये जाते हैं।

**भरणी महोत्सव :** राक्षस दारुका पर देवी भद्रकाली की जीत को भरणी महोत्सव के रूप में मनाया जाता है, यह मलयालम महीने मीनम में आयोजित एक बहुत ही रंगीन त्यौहार है। ऐसा माना जाता है कि इस दिन देवी काली और उनके आश्रित जश्न मनाते हैं और खून की दावत करते हैं। भरणी उत्सव की शुरुआत 'कोझिक्कल्लु मूडल' अनुष्ठान से होती है। पुरुष और महिलाएं 'वेलिचप्पाडु' (भविष्यवक्ता) के एक बड़े समूह के रूप में इस अद्भुत उत्सव में भाग लेने के लिए इकट्ठा होते हैं, जिसमें वे मंदिर को प्रदूषित करते हैं। ऐसा माना जाता है कि भरणी उत्सव के दौरान मंदिर की तीर्थयात्रा तीर्थयात्रियों को हैजा और चेचक के गंभीर हमलों से बचाएगी।

**थलप्पोली महोत्सव :** दिसंबर–जनवरी में पोंगल (तमिलनाडु में त्योहार) के साथ मनाया जाने वाला यह त्योहार चार दिनों तक चलता है। इस उत्सव में पारंपरिक पोशाक पहने महिलाओं का एक विशाल समूह भाग लेता है। ■

> **एक उपहार तब पवित्र होता है जब वह दिल से सही व्यक्ति को सही समय पर और सही जगह पर दिया जाता है, और जब हम बदले में कुछ भी उम्मीद नहीं करते हैं**

# भक्ति से मुक्ति

**डॉ. अर्चना प्रकाश**
स्वतंत्र लेखन
लखनऊ, उत्तर प्रदेश

भक्ति का अर्थ है स्वयं को ईश्वर के साथ जोड़ देना। भक्ति में बहुत शक्ति होती है। जब व्यक्ति का अंतस ईश्वर के साथ जुड़ जाता है तब उसकी आत्मा परमात्मा की शक्ति में समाहित हो जाती है, और वह व्यक्ति दीन दुनिया से बेखबर परम सात्विक शक्तिशाली समृद्ध व सुखी हो जाता है। नर में नारायण, सेवा कार्य एवं समस्त सृष्टि को प्रभुमय मान लेना ही सच्ची भक्ति का प्रमाण है। इस श्रेणी में भक्त प्रहलाद, ध्रुव, मीराबाई, भक्त ध्यानू आदि अनेक नाम है जो अटूट भक्ति सच्ची भक्ति के शिरोमणि माने जाते हैं। जिन्होंने सच्ची भक्ति से मुक्ति तो क्या सारे संसार को नवजीवन दिया। कहा भी जाता है कि **'भक्त के वश में है भगवान।'** भक्ति में शक्ति को प्रदर्शित करने के लिए अनेक पिक्चरें भी बन चुकी है, जैसे संतोषी माता, महादेव, भक्त हनुमान। आजकल प्रभु राम की भक्ति की चर्चा जोरों पर है।

भक्ति में वह शक्ति है जो पत्थर को भी भगवान बना देती है। संसार के कण– कण में भक्ति की असीम शक्तियां दृष्टिगोचर होती हैं। भक्ति का आधार प्रेम श्रद्धा और समर्पण है। भगवान राम ने शबरी के झूठे बेर प्रेम पूर्वक खाए थे, क्योंकि वह राम की अनन्य भक्त थी। शबरी की भक्ति को हम नवधा भक्ति के रूप में लेते हैं, उसका मोक्ष यानी मुक्ति हुई और वह पर ब्रह्म में समा गई।

भक्ति दो प्रकार की होती है – सगुण यानी सरकार ईश्वर की उपासना जैसे राम कृष्ण शिव दुर्गा आदि। दूसरी निर्गुण भक्ति यानी निराकार ईश्वर की उपासना। इसमें भक्त परब्रह्म यानि परमात्मा को एक ऊर्जा पिंड या प्रकाश पुंज के रूप में देखते हैं। लेकिन ये सभी भक्ति के मार्ग हैं, एक तरह से पथ या राहे हैं। जिन पर चलकर ईश्वर को प्राप्त किया जा सकता है।

जब व्यक्ति तमाम दुनियावी बंधनों के साथ सच्ची भक्ति निष्ठा पूर्वक अपनाता है तो उसकी मुक्ति की राह प्रशस्त हो जाती है। प्रायः व्यक्ति अपने परिवार के मृतकों की मुक्ति की कामना करते हैं, लेकिन वे यह नहीं जानते की मुक्ति और मोक्ष में अंतर है। सांसारिक कष्ट, शत्रुता, दैहिक ताप, इनसे मुक्ति मृत्यु के द्वारा मिल जाती है, लेकिन उसका मोक्ष होगा जरूरी नहीं। मुक्ति का अर्थ है अपवर्ग अर्थात सुख व दुख दोनों से परे होना। ये दोनों आत्मा के मूलभूत गुण नहीं है। इसीलिए मोक्ष की स्थिति में आत्मा दोनों से मुक्त हो जाती हैं। एक प्रकार से कर्मों के बंधन से छुटकारा ही मुक्ति है।

यहां भक्ति से जिस मुक्ति की बात हो रही है उसका तात्पर्य मोक्ष से है। भक्ति से मुक्ति का तात्पर्य ये भी है कि व्यक्ति जितनी देर ईश्वर उपासना में लीन रहता है, कम से कम उतनी देर तो उसे सभी चिताओं, कष्टों से मुक्ति यानी छुट्टी मिली ही रहती है।

प्रायः सभी विद्वानों ने संसार के दुःखमय प्रभाव को स्वीकार किया है और इससे मुक्त होने के लिए कर्म मार्ग या ज्ञान मार्ग का रास्ता अपनाया है। जिस प्रकार से नदी के प्रवाह में पड़े हुए पत्ते की कोई स्वतंत्रत गति नहीं होती उसे नदी के वेग के साथ ही बहना पड़ता है। उसी प्रकार व्यक्ति भी अपनी शुभाशुभ इच्छाओं का त्याग करके भक्ति की राह पर एकनिष्ठ होकर चले तो उसके अन्य बंधनों का धीरे–धीरे लोप हो जाता है और यही क्रम मुक्ति का प्रथम सोपान है। मुक्ति का अर्थ है जब आत्मा परब्रह्म में विलीन हो जाती है और ब्रह्मांड के चक्र से मुक्त हो जाती है तब उसकी मुक्ति हो जाती है।

उपनिषदों में आनंद की स्थिति को ही मोक्ष कहा गया है, क्योंकि आनंद में सारे द्वंदों का विलय हो जाता है।

**'अहम् ब्रह्मास्मि'** में आत्म साक्षात्कार से मोक्ष की स्थिति उत्पन्न होती है। यह स्थिति जीवन मुक्ति की स्थिति है। क्योंकि मृत्यु के उपरांत जीव ब्रह्म में विलीन हो जाता है। इस तरह ईश्वर का सानिध्य ही मुक्ति या मोक्ष है। दूसरे शब्दों में संसार से मुक्ति ही मोक्ष है।

हमारे सभी धर्म ग्रंथों में लिखा है कि मानव जीवन का मूल उद्देश्य भक्ति है। क्योंकि भक्ति के द्वारा उसे मुक्ति तो प्राप्त होती है उसके साथ ही उसे अपने पुण्य बल से सर्व सुख व महास्वर्ग भी प्राप्त होता है। अपने जीवन काल में व्यक्ति अनेकों लोगों से जुड़ता है, लेकिन उससे उसे आत्मज्ञान नहीं होता। इसके अलावा अनेक समस्याएं ऐसी होती हैं, जिसमें कोई मदद नहीं कर पता है। किंतु भगवान की शक्ति से जुड़ने पर व्यक्ति में जो ज्ञानोदय होता है उससे अनेक समस्याएं खुद ब खुद सुलझती जाती हैं।

जो स्थान कंप्यूटर में सॉफ्टवेयर का होता है वही स्थान मानव मस्तिष्क में भक्ति का है। ईश्वर भक्ति से जीवन में सुख शांति आनंद और परमात्मा से समीपता प्राप्त होती है जो सद्गुणों के विकास के लिए अति आवश्यक है।

शायद यही कारण है कि सनातन धर्म में बच्चों में बचपन से ही ईश भक्ति के संस्कार डाले जाते हैं। अलग–अलग विद्वानों ने भक्ति से अनेक लाभ बताए हैं, उनमें सांसारिक लाभ की अपेक्षा मुक्ति की प्राप्ति ही सबसे महत्वपूर्ण है।

आज के समय में जब समाज आतंकवाद, गैंग रेप, लिव इन रिलेशनशिप, लव जिहाद से जूझ रहा है, भक्ति ही एकमात्र मार्ग है जिसे शुद्ध मन से अपना कर सभी को उपकृत किया जा सकता है, जैसा कि कहा भी गया है –

**'सर्वे भवंतु सुखिनः सर्वे संतु निरामया।**
**सर्वे भद्राणि पश्यंतु मां कश्चिद दुःख भाग भवेत।'**

**प्रार्थना और ध्यान इंसान के लिए बहुत जरूरी हैं। प्रार्थना में भगवान आपकी बात सुनते हैं, और ध्यान में आप भगवान की बात सुनते हैं।**

# आनन्दरामायण में स्पष्ट बताया गया हैं कि समस्त दस अवतारों में श्रीरामावतार ही श्रेष्ठ क्यों ?

**डॉ. नरेन्द्रकुमार मेहता**
'मानसश्री' मानस शिरोमणि,
विद्यावाचस्पति एवं विद्यासागर
उज्जैन, म.प्र.

एक दिन भाईयों, पुत्रों, सीताजी तथा गुरु के साथ श्रीरामचन्द्रजी बैठे थे। प्रसंगवश हर्षित होकर श्रीराम कहने लगे, समस्त ऋषिगण, मेरे सब भाई, दोनों पुत्र, सीता, समस्त मन्त्री और माताएँ सब मेरी बात सुनें।

**यथा यथाऽवतारेऽस्मिन सुखं भुक्तं हि सीतया।**
**न तथाऽन्येषु सर्वेषु ह्यवतारेषु वै कदा।।**

*आनन्दरामायण राज्यकाण्डम् (उत्तरार्द्धम्) सर्ग २०–२१*

मैंने इस अवतार में सीता के साथ जितना सुख भोगा है, उतना किसी भी अवतार में नहीं भोगा। श्रीराम ने कहा कि उन्होंने अनेक कारणों से समय–समय पर अवतार लिए हैं, किन्तु उनकी कोई संख्या नहीं है। इतना होने के बाद भी उनके सात अवतार मुख्य हैं। श्रीराम ने अपने अवतारों को इस प्रकार बताया– आज से बहुत दिनों पूर्व महोदधि (समुद्र) में शंखासुर नामक दैत्य हुआ था जो सत्यलोक से चारों वेदों को चुरा ले गया था। उसके लिए उन्होंने मत्स्यरूप धारण किया और उसका वध करके विष्णु रूपधारी बन गया। उस मत्स्य योनि में कोई विशेष सुख नहीं प्राप्त हुआ। अतएव उस अवतार में मत्स्यरूप में ज्यादा वर्षों तक न रहे।

इसके बाद समुद्र मन्थन के समय जब उन्होंने मन्दराचल पर्वत को डूबते देखा तब (कूर्म) एक कछुए का रूप धारण किया। उस कूर्म स्वरूप को भी अच्छा न समझकर बहुत दिनों तक उस रूप में न रहे।

सोचने–विचारने की बात है कि कभी जलचर जाति तथा जल में रहकर वे सुखी कैसे हो सकते थे।

तदनन्तर पृथ्वी को समुद्र में डूबती देखकर उन्होंने वराह का रूप धारण करके पृथ्वी को अपने दाँतों पर रखकर उठाया। इस पृथ्वी पर एकमात्र मेरा राज्य है अतएव यह पृथ्वी मेरी है। इस प्रकार डींग मारने वाले हिरण्याक्ष नामक असुर का उस अवतार में वध किया। इस तरह पशुयोनि में रहकर भी उन्हें कोई विशेष सुख नहीं मिला। इसलिए उस अवतार में उस रूप को शीघ्र ही त्याग दिया।

प्रह्लाद के कथनानुसार नृसिंह रूप धारण करके खंभे से निकलना पड़ा तथा यह अवतार लेकर उन्होंने क्षणमात्र में हिरण्यकशिपु को समाप्त कर दिया। उनका वह रूप अत्यन्त ही तेजस्वी था। उनके इस रूप के भय से प्रह्लाद के अतिरिक्त उनके पास आने का सामर्थ्य

किसी के पास नहीं था। उनका यह रूप भी सिंह योनि तथा क्रोधपूर्ण था। अतः उन्हें इस रूप में आनन्द की प्राप्ति नहीं हुई।

**तदनन्तर मैंने वामन का रूप धारण कर–**
**ततो बलेर्मोहिनार्थं स्वरूपं तु वामनम्।**
**धृत्वा कृत्वा त्रिपद्याचिं भूमेः पातालग कृतः।।**

*आनन्दरामायण राज्यकाण्डम् (उत्तरार्द्धम्) सर्ग २०–३५*

बलि को नीचा दिखाने के लिए उन्होंने बहुत ही छोटा वामन का रूप धारण किया और तीन पैरों में सारी त्रिलोकी को नापकर बलि को पाताल लोक भेज दिया। उस समय भी एक तो मुनि का वेष, दूसरे वनों में रहना, तीसरे शरीर भी जितना चाहिए था उतना सुन्दर नहीं था। इसलिए उस रूप को भी शीघ्र त्याग कर वे स्वर्ग लोक लौट गए।

फिर उन्होंने ब्राह्मण रूप से परशुराम का अवतार लेकर इक्कीस बार पृथ्वी को क्षत्रिय शून्य कर डाला था। उसी अवतार में उन्होंने सहस्त्रार्जुन का वध किया। उस समय भी एक क्रोधी मुनि का रूप धारण करना पड़ा था। वन में रहने वाले मुनियों को भला कब सुख प्राप्त हो सकता था। यह सोच विचार कर उन्होंने उस जन्म में भी तपस्या ही की। उस तपस्वी जीवन में वनों में रहकर भी उन्हें उस अवतार में क्या सुख मिला होगा। इस प्रकार उन्होंने छः अवतार लेकर कार्य किया। किन्तु इन सब अवतारों में सुख का नाम कहीं नहीं था।

श्रीराम ने कहा कि–

**न जाता सुखवार्ताऽपि तत्र क्वापि मुनीश्वराः।**
**द्वापरेऽग्रे कृष्णरूपं गोकुलेऽत्र करोम्यहम्।।**

*आनन्दरामायण राज्यकाण्ड उत्तरार्द्ध सर्ग २०–४२*

उन छः अवतारों में मुझे सुख नाममात्र भी मिला। अतः आगे द्वापर युग में इस पृथ्वी पर गोकुल में कृष्ण रूप से अवतार लूँगा। ईश्वर सर्वज्ञ है अतः उन्होंने कहा कि सुख उस अवतार में भी नहीं पा सकूंगा। ध्यानपूर्वक सुनिये उस अवतार का विवरण आप सबको विस्तारपूर्वक बतलाता हूँ। मेरे जन्म के पहले ही मेरे माता–पिता कारागार में रहेंगे। शैशवकाल में माता–पिता से दूर होकर एक अन्य व्यक्ति नन्दबाबा के घर गोकुल में रहकर पालन–पोषण होगा। उस गाँव के वेष से गौओं के पीछे–पीछे घूमने में मुझे क्या सुख मिलेगा। फिर गो (वत्सासुरा), स्त्री (पूतना), नाग (कालिया), अश्व (केशी) तथा पक्षी (बकासुर) का वध करूँगा। फिर गोकुल में चोरी आदि कर लेने के बाद मथुरा जाकर हाथी कुलयापीड़ के साथ मामा कंस को मारूँगा। कालयवन के भय से मुझे परास्त भी होना पड़ेगा। पराजय से बढ़कर इस संसार में कोई दुरूख नहीं हो सकता। तदनन्तर समुद्र के किनारे अपना निवास स्थान निर्मित कर कुछ दिनों तक वहाँ ही रहूँगा। यह बात निश्चित है कि इस अवतार में भी अधिक वर्षों तक संसार में न रहूँगा। मध्य देश में निवासस्थान न रहने के कारण मेरे पास कोई राज्य भी नहीं रहेगा। उस जन्म में राजाओं की उपभोग्य वस्तुएँ छत्र–चँवर आदि भी उनके पास नहीं रहेंगे। बहुतसी स्त्रियों के बीच मेरा अकेला शरीर रहेगा। उस समय दिन रात यही चिन्ता रहेगी कि इनमें से किसे सुख दें और किसे दुःख तथा सदा मुझे उनका मनुहार करना पड़ेगा। जिस मनुष्य को संसार में दुःख भोगने की इच्छा हो, वह कई स्त्रियों को रख ले और देखे उसका फल। कहने का तात्पर्य यह है कि मुझे उस अवतार में भी कुछ भी सुख नहीं मिलेगा। अन्त में ब्राह्मण के शाप से मेरे अवतार की समाप्ति होगी।

इसके अनन्तर कलि में दैत्यों को यज्ञ कर्म करते देखकर मैं अतिशय मनमोहक बौद्ध अवतार लूँगा। अपनी बातों से उन दुष्टों की बुद्धि (मति) यज्ञ की ओर से हटाकर कुछ दिनों तक संसार में रहूँगा। उस समय मैं अहिंसा व्रत का प्रचार करूँगा।

तदनन्तर मैं कलियुग के अन्त में सब लोगों को वर्णसंकर होते देखकर मैं कल्कि अवतार लूँगा।

**भूत्वाऽत्र विप्रदेहेन खड्गधारी हयस्थितः।**
**संहार क्षणमात्रेण दुष्टानां हि करोम्यहम्।।**

*आनन्दरामायण राज्यकाण्ड उत्तरार्द्ध सर्ग २०–६४*

उस जन्म में एक विप्र के यहाँ उत्पन्न होकर और घोड़े पर सवार होकर क्षण मात्र में दुष्टों का संहार कर डालूँगा। हे ब्राह्मणों यह अवतार भी चिरस्थायी नहीं होगा। अतएव उसमें भी कुछ सुख नहीं भोग सकूँगा।

उसके बाद पुनरू सत्ययुग आ जाएगा और पहले की तरह मैं फिर अवतार लेता रहूँगा। इस तरह नौ अवतारों में कुछ सुख नहीं मिलेगा। किन्तु इस (रामावतार) अवतार में मैंने अपने इच्छानुसार सुख भोग लिया है। इस अवतार के समान कोई अवतार इस संसार में हुआ है, न होगा। इसमें सातों द्वीपों का प्रभुत्व सीता जैसी स्त्री, कुश–लव जैसे महावीर और धनुर्धारी पुत्र, तीनों लोकों को जीतने वाले भ्राता और कामधेनु आदि सात रत्न विद्यमान है। जहाँ वेद के साक्षात् स्वरूप गुरु वसिष्ठ हैं, आर्यावर्त जैसे पवित्र, देश में निवासस्थान है, राज्य भोगों की प्रतिद्वंद्विता करने वाला और कोई नहीं है, जहाँ सत्य का व्रत है, जहाँ अटल एक पत्नी व्रत है। जहाँ केवल एक ही बाण से शत्रु को मारने का सामर्थ्य है। जहाँ ऋषि–मुनिगण बेरोक–टोक जहाँ चाहे, तहाँ जा सकते हैं। जहाँ कि पुष्पक विमान जैसी सवारी का वाहन है। सुग्रीव और विभीषण जैसे मित्र हैं, शत्रुओं का नाश करने वाला कोदण्ड जैसा धनुष है।

**सूर्यवंशे यत्र जन्म ततो दशरथोवरः।**
**कौसल्या यत्र जननी यत्राहं स्ववशरू सदा।।**
**सुमेधासशी यत्र में श्वश्रुरू स्नेहवर्धिनी।**
**विदेह श्वसुरो यत्र विद्यादो यत्र गाधिजः।।**
**लक्ष्मणो यत्र में मन्त्री सरयूर्यत्र में नदी।**
**पार्श्वगा हाड्गदाद्याश्च चतुर्दन्तो गजो महान्।।**

*आनन्दरामायण राज्यकाण्ड उत्तरार्द्ध सर्ग २०–७६–७७–७८*

सूर्यवंश में जन्म हुआ है, दशरथ जैसे पिता और कौसल्या जैसी माता है, जहाँ कि मैं सदा स्वाधीन रहता हूँ। स्नेह को बढ़ाने वाली सुमेधा जैसी सास है, विदेह जैसे ससुर है, विश्वामित्र जैसे विद्यादाता गुरु है। लक्ष्मण जैसे मंत्री हैं, सरयू जैसी नदी है, अंगदादि वीर अंगरक्षक है बड़ा भारी चतुर्दन्त हाथी है। बैकुण्ठ के समान विशाल सुन्दर भवन है। चिन्तामणि जैसा अलंकार सदा

हृदय पर रहता है, जहाँ ग्यारह हजार वर्षो की लम्बी आयु है। किसी भी राजा के सामने न झुकने वाला यह मस्तक है। यहाँ सो सुख है वह क्या अन्यत्र मिल सकता है? अब मेरे हृदय में किसी भी प्रकार का भी सुख भोग करने की कामना शेष नहीं रह गई है। इसीलिए मैंने पूर्ण रूप से इस अवतार को धारण किया था। भूत और भविष्य के अवतारों में जो अंश बाकी रह गए थे, उनके सहित यह अवतार लिया है। जो बाल्यकाल सीता तथा भाई के साथ वन की यात्रा की थी, वह दुरूख भोगने के लिए नहीं वरन् संसार के लोगों को उपदेश देने के लिए की थी। उससे मैंने संसारी लोगों को कौन सा उपदेश दिया है, वह भी बता देता हूँ।

कितना ही परिश्रम साध्य हो, फिर भी पिता की बात आज्ञा माननी चाहिए। यह उपदेश देने के लिए मैंने उस समय पिता की आज्ञा का पालन किया था। क्या पिता की बात टालने का सामर्थ्य मुझे में नहीं थी? पर जनशिक्षा लोकशिक्षा के लिए उनकी बात मान ली थी। क्या उस समय माता कैकेयी तथा राज्यतिलक में विघ्न डालने वाली पापिनी मन्थरा के वध करने का पराक्रम मुझमें नहीं था, पर उनको दण्ड न देकर मैंने संसार को यह शिक्षा दी कि स्त्री का वध कभी भी नहीं करना चाहिए और अपनी सौतेली माँ की आज्ञा भी उसी तरह पालन करना चाहिए, जिस प्रकार लोग अपनी सगी माता की आज्ञा का पालन करते हैं। मुझे यह भी प्रजा में उपदेश देना था कि अपने सुख के लिए पराये का वध न करना चाहिए। इसी कारण से मैंने कैकेयी तथा मन्थरा का वध नहीं किया।

अपने भाई की हिंसा न करे और दूसरे का राज्य न हड़पना चाहिए। यह उपदेश देने के लिए ही मैंने भरत पर आँख नहीं उठाई, उन्हें नहीं मारना चाहा। पिताजी के स्वर्गवासी हो जाने के पश्चात् भी मैंने उस राज्य को स्वीकार नहीं किया।

**राज्यासक्ता नरा भूम्यां भोगासक्ता भवन्तु न।**
**उपदेष्टुं जनानित्थमहं पूर्वं वनं गतः।।**
**मातृपितृसुहृत्पुत्रस्नेहासक्तिं न कारयेत्।**
**इत्थं मयोपदिशता त्यक्तः स्नेहस्तदा द्विजाः।।**

*आनन्दरामायण राज्यकाण्ड उत्तरार्द्ध सर्ग २०–९२–९३*

राज्य में आसक्त लोग सर्वथा विलासी न हो जाएं, यह उपदेश देने के लिए ही मैं वन को गया था। माता–पिता, मित्र पुत्र आदि के स्नेह में अधिक आसक्त न हो जाना चाहिए। यह उपदेश देते हुए मैंने स्नेह का परित्याग कर दिया था।

सुख दुःख दोनों को समान समझना चाहिए। सुख में न विशेष हर्षित हो, न दुःख में घबराए। यह उपदेश देने के लिए ही मैंने राज्य सुख का त्याग कर वन के क्लेशों को अपनाया था। काम–क्रोध आदि दुष्ट शत्रुओं को मारना चाहिए। यह उपदेश देने के लिए ही मैंने वन में रहकर बहुत से मुनि हिंसक राक्षसों का वध किया था। स्त्रियों में अधिक आसक्त होना ठीक नहीं, बल्कि उनका संग त्याग कर दूर रहते हुए तपस्या करें। यही उपदेश देने के लिए मैंने वन में सीता को भेजकर उनसे वियोग दर्शाया था। वास्तव में सीता हमसे पृथक् कभी नहीं हो सकती। मनुष्य मात्र को चाहिए कि वह दुखी जन की रक्षा करे और दुष्टों को कठोर दण्ड दें। सुग्रीव और विभीषण की रक्षा करके दुष्ट बालि और रावण को मारकर संसार को मैंने यही उपदेश दिया था। इस संसार में मनुष्य को चाहिए कि वह अपनी कीर्ति–यश का विस्तार करे। इसीलिए मैंने समुद्र के पानी में पत्थर तैराये थे। वैसे मैं चाहता तो क्या आकाश मार्ग से चलकर लंका नहीं पहुँच सकता था?

यदि कोई वस्तु अपने को प्रिय हो, किन्तु संसार के विरुद्ध हो तो उस प्रिय वस्तु का भी परित्याग कर देना चाहिए। यह उपदेश देने के लिए ही मैंने लंका में अग्नि को साक्षी दे तथा पवित्र जानकर भी लोकोपवाद के भयवश सीता का परित्याग कर दिया था। भ्रमवश यदि किसी पवित्र वस्तु को त्याग दें और बाद में मालूम हो कि वह शुद्ध है तो उसको फिर से अंगीकार कर लेना चाहिए। यह उपदेश देने के लिए ही मैंने पहले त्यागी हुई सीता को भी फिर स्वीकार कर लिया। उसी प्रकार एक पत्नीव्रत, अनेक प्रकार के राज्य कार्य, अश्वमेघादि, यज्ञ, सदाचार, जप, तप, स्नान संध्या आदि जितना भी कार्य हम करते हैं यह सब लोगों को उपदेश देने के लिए ही तो कर रहे हैं। सुख–दुःख जो संसार में बताए हैं वे अवतार के आधार पर आप लोगों के लिए कौतुक (लीला) के लिए कहे हैं, इसमें कोई संशय नहीं है। अपने भक्तों के सन्तोषार्थ विशेष गुण सम्पन्न ये अवतार गिनाए, वास्तव में सब अवतारों का अपना एक विशेष स्थान महत्व है। वास्तविक रूप में देखा जाए तो सब अवतार बराबर है। किन्तु अपनी बुद्धि से भलीभाँति विचार करके मैं इस निश्चय पर पहुँचा हूँ कि–

**विशेषगुणानुक्तरू सन्ति सर्वे समा मम।**
**सम्यग्बुद्धया विचाराच्च वरिष्ठः सकलेष्ययम्।।**

*आनन्दरामायण राज्यकाण्डम् उत्तरार्द्धम् सर्ग २०–११०*

समस्त अवतारों में यह रामावतार सर्वश्रेष्ठ है। दो अवतार जलरूप के, दो वनचर, दो वल्कल, एक वैश्य वर्ण को गोरूप, एक बुद्ध अवतार, एक क्षणिक ये भूत तथा भविष्य के सारे अवतार मेरे मन के नहीं हैं। इनसे मैं प्रसन्न नहीं हूँ।

**अयं सर्वविशष्टोऽत्र ह्युपासकजनप्रियः।**
**अवतारस्त्वहं वेद्मी सेवनान्मंगलप्रदः।।**

*आनन्दरामायण राज्यकाण्डम् उत्तरार्द्धम् सर्ग २०–११३*

इस अवतार में मैंने जितने काम दिए हैं वे सब अतिशय रम्य, पातकों को नष्ट करने वाले तथा सुनने से मुक्ति देने वाले हैं। भक्तों को चाहिए कि मेरे इसी अवतार का भजन करें। जो लोग इसकी उपासना करते हैं, वे मुझे सदा से अत्यन्त ही प्रिय है।

**नहि रामसमः कश्चिद् विद्यते त्रिदशेष्वपि।**

वा.रा.सु.का. ११–३

देवताओं में भी कोई ऐसा नहीं जो श्रीराम की समानता कर सके।

**रामेण सकृशो देवो न भूतो न भविष्यति।**

श्रीरामचन्द्रजी के समान न कोई देवता हुआ है और न होगा ही।

*(कल्याण अंक फरवरी २०१८)*

# भारतीय नववर्ष

**डॉ. अ कीर्ति वर्द्धन**
मुजफ्फरनगर, उत्तर प्रदेश

बदलेगा नव वर्ष नया संवत आयेगा,
कुदरत में भी रंग नया दिख जायेगा।
चहकें चिड़िया और परिन्दे नीलगगन,
कली– कली पर भौरा रास रचायेगा।
झूमेगी सरसों खेतों में धानी चूनर ओढ़े,
अंकुरित नव पात, पीत पत्र झर जायेगा।
कोयल कुकेगी बागों में, आम वृक्ष बैठी,
शीतल मन्द पवन का झौंका मन हर्षायेगा।

भारतीय नववर्ष विक्रम संवत से प्रारम्भ होता है। जो कि वर्तमान वर्ष से 57 वर्ष पूर्व से गिना जाता है। इस समय 2023+ 57= 2080 चल रहा है आगामी संवत का शुभारंभ 9 अप्रेल से शुरू होने वाला है। 2024+ 57= 2081 संवत। नये संवत का आगाज चौत्र मास यानि लगभग मार्च मे होता है। जब मौसम बदलता है, नयी फसले आती हैं। सर्दी का अन्त हो जाता है। कन्या पूजन नवरात्रो का आयोजन किया जाता है। जब भू गगन वायु अग्नि नीर यानि सम्पूर्ण प्रकृति उत्साह से भर नाच उठती है। वृक्षो से पीत पत्र झर जाते हैं, नयी कोपले फूटती हैं, तब होता है नव वर्ष। आप सबकी खुश मे शामिल हों अच्छा है, मगर क्या कभी अपना नववर्ष मनाया? वह नववर्ष जिसका आधार वैज्ञानिक है, प्रकृति से जुडा है। इस बार भारतीय नववर्ष भी इतने ही उत्साह से मनाये। पूजा पाठ, धर्म कर्म और हवन करें।

हमारे नववर्ष पर शराब और मांस का प्रयोग नही होता है। निर्दोषों बेजुबानो को स्वाद के लिये मारा नही जाता है। हमारा नववर्ष मानवता को समर्पित है। दीन दुखी की सेवा करना ही मानवता है, यही सनातन है, यही हिन्दू धर्म है। तब जन मानस उठता है–

बदला है नववर्ष, नया संवत आया है,
कुदरत ने रंग रूप, नया दिखलाया है।
फूल रहे हैं प्लाश, खेत में सरसों फूली,
चहूँ ओर हरियाली, मधुमास आया है।
सूख सूख कर पीत पत्र, वृक्षों से झडते,
नव अंकुरण आस, नया संवत लाया है।
महक रहा है बौर, आम पर कोयल कूके,
हर्षित है हर किसान, खेत लहलहाया है।
भौरें तितली घूम रहे, मकरन्द की आस में,
मधुमक्खी मदमस्त घूमती, बसन्त आया है।
छोडे कम्बल और रजाई, कोट– स्वैटर त्यागे,
शीतल मंद पवन, हवा का झौंका आया है।
घर– घर में होगा अन्न, धन– धान्य की वर्षा,
चलो मनायें उत्सव, नया संवत आया है।
करें प्रकट आभार प्रकृति का, पूजा करके,
हो कन्या सम्मान, शास्त्रों ने बतलाया है।

# संत ज्ञानेश्वर

**वंदना पुणतांबेकर**
स्वतंत्र लेखन
इंदौर, मध्यप्रदेश

हमारे हिन्दू धर्म की व्याख्या बहुत विराट है। हमारे सनातन धर्म में अनेक संत कवि हुए और हमें सत मार्ग दिखाकर चले गए कुछ लोग उनकी काव्य कृतियों को पढ़ते हैं तो कुछ भूल गए हैं ऐसे ही एक संत ज्ञानेश्वर महाराज हुए जो संतों में श्रेष्ठ कहे गए।

725 वर्ष पूर्व आणंदी ग्राम की बात है। संत ज्ञानेश्वर अपने परिवार के साथ आणंदी में रहते थे। इनके पिता श्री विठ्ठलपंथ कुलकर्णी जिन्होंने सन्यास धारण किया था। लेकिन गुरु की आज्ञा का पालन करने हेतु उन्होंने पुनः गृहस्थ आश्रम में प्रवेश किया तो आणंदी ग्राम के धर्माचार्यो ने उन्हें आणंदी से (ग्रामण्य) गाँव से बहिष्कृत कर दिया। वह प्रत्येक वस्तु के अभाव में जीते रहे।

भिक्षा भी उन्हें बमुश्किल मिलती। ज्ञानेश्वर के पिता विठ्ठल पंत कुलकर्णी को गीता मौखिक रूप से याद थी वह बहुत ही दयालु और समाजसेवी थे उन्होंने अपने बच्चों को बहुत अच्छी शिक्षा और संस्कार दिए। उनके 3 पुत्र निवृत्ति, ज्ञानेश्वर, सोपान, और एक पुत्री मुक्ता थी।

अपने बच्चों के ज्ञानार्जन व उपनयन संस्कार हेतु उन्हें बहुत सी कठिन परीक्षाओं से गुजरना पड़ा। धर्माचार्यो के आदेशानुसार आखिरकार उन्हें देहांत (देहत्याग) कर प्रायश्चित करना पड़ा। संत ज्ञानेश्वर के माता–पिता विट्ठल पंत और रुक्मणी ने इंद्रायणी नदी में प्रायश्चित हेतु देहत्याग किया। माता–पिता के चले जाने के बाद अपनी शिक्षा–दीक्षा हेतु इन मासूम बच्चों ने भी बहुत कष्टों का सामना किया इन चारों बच्चों ने आणंदी से पैठण तक पैदल यात्रा की यात्रा के दौरान बहुत सी परीक्षाएं देने के बाद ज्ञानेश्वर पर प्रभु पांडुरंग (माउली) की कृपा हुई उन्हें दिव्यता की प्राप्ति हुई। पैठण में अपनी दिव्यता द्वारा धर्माचार्यो का विश्वास जीतकर पैठण से उन्हें (शिक्षा) (दीक्षा) हेतु आज्ञा पत्र प्राप्त हुआ। सारे पैठन वासी उनके दिव्यता और दिव्य ज्ञान से प्रभावित तथा लाभान्वित हुए। संत ज्ञानेश्वर ने सतत साधना द्वारा जन–जन का कल्याण कर अपने पिता द्वारा लिखित (गीता) ग्रन्थ का प्रचार जन–जन में

किया। उनका मानना था की भक्ति का स्वरूप ही शुद्ध प्रेम है और परम प्रेम का नाम ही भक्ति है संत ज्ञानेश्वर का विचार था कि ईश्वर की सहज स्थिति का नाम ही भक्ति है ।

ज्ञानेश्वर महाराज कृत भावार्थ दीपिका नामक व्याख्या जो पुरानी मराठी भाषा में लिखी गई भक्ति रस से ओतप्रोत थी। ज्ञानेश्वरी गीता संस्कृत, हिन्दी,मराठी भाषा में प्रसिद्ध है यह ग्रन्थ साहित्य की दृष्टि से अनुपम है तथा सिद्धान्त की दृष्टि से भी अनोखा है। इसमें गीता के प्रत्येक श्लोक का केवल भाव ही दिया है सम्पूर्ण व्याख्यान अद्भुत ज्ञान तथा भक्ति से भरा हुआ है। इस ग्रन्थ की यही विशेषता है। संत ज्ञानेश्वर ने हरि पाठ नामक ग्रन्थ लिखा जिसमें उन्होंने स्वतन्त्र रूप से सम्पूर्ण अध्यात्म शास्त्र का निरूपण किया है। यह ग्रन्थ भी उच्च श्रेणी का हैं।संत ज्ञानेश्वर महाराज हुए जो संतों में श्रेष्ठ कहे गए। संत ज्ञानेश्वर महाराष्ट्र तेरहवीं सदी के एक महान सन्त थे। इन्होंने ज्ञानेश्वरी की रचना की। संत ज्ञानेश्वर की गणना भारत के महान संतों एवं मराठी कवियों में होती है। ये संत नामदेव के समकालीन थे और उनके साथ इन्होंने पूरे महाराष्ट्र का भ्रमण कर लोगों को ज्ञान–भक्ति से परिचित कराया और समता, समभाव का उपदेश दिया। वे महाराष्ट्र–संस्कृति के 'आद्य– प्रवर्तकों' में भी माने जाते हैं। आज भी संत ज्ञानेश्वर महाराज की प्रतिची आणंदी और पैठन में प्रसिद्ध व पूजनीय है।

# मैं कण तुम्हारा एक हूँ...

**रमेश चन्द्र**
गुरुग्राम

तू नाथ, तो मैं दास हूँ,
मैं तेरा ही विश्वास हूँ।
मैं नर, तो नारायण तू,
मैं पार, तो पारायण तू।
मैं कथ्य, तू कथनीय,
मैं क्षुद्र, तू शपथनीय।
मैं चिंता, तू चिंतामणि,
मैं धूलकण, तुम हो मणि।
मैं होम हूँ, तुम ओउम् हो,
मैं रंध्र हूँ, तुम व्योम हो।
मैं चित्त, तो आनंद तुम,
मैं शिक्षा, विद्यानंद तुम।

मैं कालजित, तुम कालजयी,
मैं प्राण, तो तुम प्राणमयी।
मैं निवेदन, तो निवेद्य तुम,
मैं भासमान, अभेद्य तुम।
मैं जग, तुम जगदीश हो,
मैं वाक, तुम वागीश हो।
मैं नामधारी, नाम तू,
मैं धर्म, तो है धाम तू।
मैं मुमुक्षु, तुम मोक्ष हो,
मैं प्रकट, तुम परोक्ष हो।
मैं जिज्ञासा, तुम ज्ञान हो,
मैं तम, तुम ज्योतिर्मान हो।

मैं नश्वर, तुम शाश्वत्,
तुम सरस्वती, मैं सारस्वत।
मैं शव हूँ, तुम शिव हो,
मैं अणु हूँ, तुम विष्णु हो।
मैं 'अहम्' हूँ, तुम ब्रह्म हो,
मैं कर्म हूँ, तुम मर्म हो।
जैसे मैं इति हूँ प्रभु,
वैसे तुम नेति हो प्रभु!
मैं कण तुम्हारा एक हूँ,
मैं तेरा ही विवेक हूँ।
ले ले शरण में जो प्रभु,
तो खल, अधम मैं नेक हूँ!

# कैला देवी दर्शन

**यात्रा वृत्तांत**

**मुकेश कुमार ऋषि वर्मा**
आगरा, उत्तर प्रदेश

22 मार्च 2024 को कैला देवी धाम यात्रा का शुभ योग बना। छोटा भाई अपने पुत्र का मुंडन जिसे गांव की भाषा में (लटुरियां लेना) भी कहा जाता है। हेतु बोलेरो गाड़ी से रात्रि करीब 9:00 बजे हम निकल पड़े। हम परिवारीजन व कुछ रिश्तेदारों से गाड़ी खचाखच भर गई। फतेहाबाद पहुंचते ही हमने हल्का नाश्तापानी किया और एक अन्य गाड़ी के साथ हमारी यह धार्मिक यात्रा पुनः प्रारंभ हो गई। हमने यात्रा का शुभारंभ अपनी ग्राम देवी व अपने पितरों के पूजन अर्चन के साथ किया।

हमारी गाड़ी रात्रि 2:00 बजे तक लगातार चली। करौली शहर से पहले ही एक पेट्रोल पंप पर रात्रि विश्राम हेतु गाड़ियां रोक दी गई। सभी जनों ने सुबह 5:00 बजे तक विश्राम किया। किसी को नींद आई तो किसी को नहीं। वैसे मुझे तो बहुत आई। दैनिक क्रियाओं से फ्री होकर हमारी गाड़ी ने पुनः दौड़ना शुरु कर दिया।

खेतों में फसलें पकी खड़ी थीं तो कुछ फसलें कट कटा कर किसानों के घर पहुंच चुकी थीं। देहात में राजस्थानी पहनावा देखने को मिला। राजस्थानी पहनावा बहुत सुंदर होता है। एक कहावत है कि राजस्थानी स्त्रियां पुरुषों से कई गुना अधिक मेहनत करती हैं। यह सच भी है। खेतों में अधिकतर स्त्रियां ही नजर आ रहीं थीं। परंतु इसका मतलब यह नहीं की पुरुष निकम्मे होते हैं, वे भी अपनी जिम्मेदारियों को बड़े अच्छे ढंग से निभाते हैं।

पहाड़ों के इस देश में जीवन सामान्य ही लगा मुझे तो। अब हमारी गाड़ी करौली शहर में प्रवेश कर चुकी थी। करौली शहर बाकी शहरों की तरह ही लगा, शहर न अधिक गंदा न ज्यादा साफ। करौली शहर से 24 किमी दूर पर पहाड़ों में विराजी मां कैला देवी भक्तों के

दु:ख– दर्द दर्शन मात्र से दूर कर देती हैं।

कहा जाता है कि देवी मां ने केदारगिरी नाम के एक स्थानीय संत को दर्शन देकर आश्वासन दिया कि वह क्षेत्रीय लोगों के पास आएंगी। लोक कथा यह भी है कि नगरकोट से भाग रहे एक योगी इन्हें (कैला माता) को आक्रमणकारियों से बचाने के लिए अपने साथ बैलगाड़ी पर ले आए। बैल घने जंगल के बीच पहाड़ी के मध्य भाग में रुक गये और चलने से इनकार कर दिया। देवीय विधान से मूर्ति उसी स्थान पर स्थापित की गई जहां वह आज भी मौजूद है।

कैला देवी के आशीर्वाद से करौली के यदुवंशी शासको का मंदिर से सदैव गहरा नाता रहा है। महाराजा गोपाल सिंह जी ने 1723 ई. में मंदिर की नींव रखी थी। 1886 ईस्वी में सिंहासन पर बैठने वाले महाराज भंवर पाल ने अच्छी शैली में मंदिर का पुनः निर्माण कराया। कई जलाशयों व सुंदर नक्काशीदार बड़ी धर्मशाला का निर्माण भी कराया। 1927 ईस्वी में अर्जुन पाल जी ने एक कुंड बनवाया जो आज भी मौजूद है। मंदिर का विकास लगातार चलता रहा। 2017 में मंदिर की गुंबद को शुद्ध सोने से सजाने की परियोजना पूरी हुई। जटिल गुंबद का चमकता सोना इसे देश के सबसे आकर्षक तीर्थ स्थलों में से एक बनाता है। स्नान के लिए काली शिला प्रसिद्ध है।

कैला देवी जी का विस्तृत वर्णन स्कंद पुराण के 65 वें अध्याय में दिया गया है। जिसमें कहा गया है कि देवी ने स्वयं घोषणा की थी कि कलयुग में उनका नाम कैला होगा। उनके भक्त कैलेश्वरी के रूप में उनकी पूजा अर्चना करेंगे। माना जाता है कि 11वीं शताब्दी के आसपास करौली के जंगलों में उनकी प्रतिमा आई थी। कैला देवी उन्हीं देवी महायोगिनी महामाया का एक रूप है, जिन्होंने नंद और यशोदा के घर जन्म लिया और उनकी जगह भगवान कृष्ण ने ले ली। जब कंस ने उन्हें मारने की कोशिश की तो उन्होंने अपना दिव्य रूप दिखाया और कहा कि जिसे वह मारना चाहता था, वह पहले ही कहीं और जन्म ले चुका है। उसी देवी को आज कैला देवी के रूप में सारा संसार पूज रहा है। चौत्र मास में शक्ति पूजा का विशेष महत्व रहता है पर्वत श्रृंखलाओं के मध्य त्रिकूट पर्वत पर विराजमान कैला मैया का दरबार चौत्र मास में लघु कुंभ नजर आता है। मंदिर व मेले का प्रबंधन श्री कैला देवी मंदिर ट्रस्ट देखता है। यह तो रहा मंदिर का इतिहास।

हम सभी जन एक धर्मशाला में रुके, दैनिक क्रियाओं से निवृत्त हुए। मैं अपने बड़े भाई (दिव्यांग) को माता के दर्शन कराने अपने साथ ले गया, दर्शन हम दोनों भाइयों ने मिलकर किये। जीवन धन्य– धन्य हो गया। दर्शन –पूजन करके हम बाहर निकल आये। एक दुकान पर नाश्ता किया और पहुंच गये फिर से धर्मशाला में... आराम किया कुछ देर फिर धर्मशाला का हिसाब किया। धर्मशाला छोड़ बाजार में आ गये, थोड़ी बहुत खरीदारी की। एक ढाबे पर खाना खाया। बाहर आये तो देखा ड्राइवर लोग गायब। दो घंटे परेशान करने के बाद आये देवदूत।

अब मां से विदाई लेने का समय आ गया और व्यथित हृदय से मां कैला देवी धाम को छोड़ हम घर की ओर चल पड़े। हम रात्रि करीब 10:00 बजे घर पहुंच गये। यात्रा आनंददाई व मंगलकारी रही।